चन्दामामा
दीपावली विशेषांक

Photo by S. G. Pradhan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

बुलाते हैं, संकेत से !

प्रेषक
श्री. वेणु गोपालराव-जमशेदपुर.

शीघ्र आ रहा है !
ए. वी. एम का
भाई-भाई
हंसी और आंसू ओंके हिंडोलेपर प्रतिक्षण घुमाने वाला "कुटुम्ब चित्र"
अशोक कुमार • किशोर कुमार
निम्मी • निरूपा रॉय
डेवीड और ओमप्रकाश
AVM PRODUCTIONS
राजेन्द्र कृष्ण • एम. वी. रामन • मदन मोहन

चन्दामामा

वर्ष ७ नवम्बर १९५५ अंक ३

विषय - सूची

[चाहे आप कोई भी भाषा बोलते हों, कहीं भी रहते हों, आप अपनी भाषा में, अपनी जगह "चन्दामामा" मँगा सकते हैं।]

वार्षिक चन्दा	एक प्रति
रु. ४-८-०	रु. ०-६-०

एक शिशु ने क्रोधी राजा के अनुग्रह का प्रार्थना की....

कलाकार : निम्मी, प्रदीप कुमार, रूपमाला, जीवन और ललिता पवार

कहानी लेखक : पंडित मुखराम शर्मा

निर्देशक : भालचन्द्र शुक्ल, हरसुख भट

संगीत : चित्रगुप्त

प्रदर्शन की तिथि की प्रतीक्षा कीजिए!

प्रकाशित करनेवाले : राजश्री पिक्चर्स लि., और दी स्क्रीन्स

स्टाइल और
कमफ़र्ट के लिये

टिकाऊ और
शोभा के लिये

"स्टेट ड्रेसेस"

बिन्नी के तथा अन्य उत्तम
शानफोराइज़्ड सिकुड़ाये फेब्रिक्स से बनाये जाते हैं।
ऊँचे दर्जे के सभी तरह के 'काट्सऊल' ड्रेस भी प्राप्त होंगे।

बनानेवाले : **स्टेट ट्रेडर्स**, चिकपेट, बेंगलूर-२.

इन्सानियत
जेमिनी चित्र
अभिनेता
दिलीपकुमार · देवानंद · बीना राय
विजयलक्ष्मी · जयंत · जैराज
शोभना समर्थ · कुमार · आगा
बद्रीप्रसाद · मोहना & ज़िप्पी

डोंगरे बालामृत
के. टी. डोंगरे एण्ड कं. लि. बम्बई ४

सुन्दर लय और भावोत्पादक सौन्दर्य के भारतीय नृत्य, स्फूर्तिदायक टेक्नीकलर में–

★

निर्देशक :

व्ही. शांताराम

★

कलाकार :

संध्या

गोपीकृष्ण

भगवान

★

राजकमल का

* झनक झनक पायल बाजे *

अब भारत भर में प्रदर्शित किया जा रहा है।

वितरक :

सिल्वर स्क्रीन एक्स्चेंज लिमिटेड, बम्बई–भुसावल.

विक्री के लिए तैयार है!

विचित्र जुड़वाँ

यह एक ऐसी मनोहर कहानी है, जो धारावाहिक घटनाओं से ओतप्रोत है और आपके दिल को चौंधिया देती है।

इसका आकार-प्रकार अत्यन्त आकर्षक और कलात्मक ढंग से बनाया जा रहा है।

प्रत्येक प्रति का दाम : एक रुपया मात्र

डाक-व्यय दो आना अतिरिक्त है।
रु. १-६-० हमें मिलने पर पुस्तक रजिस्ट्री से भेज दी जायगी।

एजेण्ट और पाठक शीघ्र ही अपने आर्डर भेज दें।

★

पुस्तक विभाग :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स,

मद्रास - २६

बच्चों की हरेक बीमारी का सर्वोत्तम इलाज

बालसाथी

सम्पूर्ण आयुर्वेदिक पद्धति से बनाई हुई है। बच्चों के रोगों—सिम्य-रोग, पॅठन, ताप (बुखार) खाँसी, मरोड़, हरे दस्त, दस्तों का न होना, पेट में दर्द, फेफड़े की सूजन, दाँत निकलते समय की पीड़ा आदि को आश्चर्य-रूप से शर्तिया आराम करता है। मूल्य १) एक डिब्बी का।

सब दवावाले बेचते हैं।

लिखिए:-वैद्य जगन्नाथ जी. बराथ
आफ़िस : नड़ियाद

भविष्य उनके हाथों में है !

उन्हें अच्छी तरह पढ़ाइये और जितना आपसे बन पड़े, उनके स्वास्थ्य की, मानसिक, नैतिक और शारीरिक उन्नति में हाथ बँटाइये। तभी ये भविष्य के कार्यक्रम में एक सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकेंगे। **जे. बी. मंघाराम एण्ड कंपनी** बड़ी प्रसन्नता के साथ उनके स्वास्थ्य की उन्नति एवं प्रगति का, अपने थोड़े-से अंश का योग-दान प्रस्तुत करती है।

जे. बी. मंघाराम के बिस्कुट स्वास्थ्यकर गेहूँ, दूध और ग्लूकोज़ से बनाये गये हैं, जो उन्हें अपने स्कूल और कालिज की व्यस्तता की घड़ियों में स्फूर्तिदायक रहने की शक्ति प्रदान करते हैं !

जे. बी. मंघाराम एण्ड कंपनी, ग्वालियर.

ये हर जगह प्राप्त हैं।

हम अपने

पाठकों, एजण्टों, विज्ञापनदाताओं

और

विज्ञापन सलाहदारों को

★ **दि वा ली** ★

के

इस शुभ अवसर पर

हार्दिक बधाइयाँ देते हैं।

★

चन्दामामा पब्लिकेशन्स

मद्रास - २६

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये
वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टॉनिक
VEER BACHHA
बिड़ला लेबोरेटरीज़, कलकत्ता ३०

★ एजेण्ट चाहिये ★

हमारे यहाँ से प्रकाशित आकर्षक एवं सुन्दर कलैण्डरों, तथा दिवाली कार्डों के आर्डर बुक करने के लिये अच्छे कमीशन पर एजेण्टों की आवश्यकता है। आज ही नियमावली मंगावें।

★ सुन्दर कलैण्डर ★

असली आर्ट पेपर पर रंगीन चित्रों के सुन्दर व आकर्षक धार्मिक, राष्ट्रीय, फिल्मी व सीनरियों के २५ कलैण्डर ३) में भेजे जाते हैं। डाकखर्च १) अलग। कमरे, बैठक सजाने के लिए अपूर्व अवसर है। प्रचार के लिए ७) के कलैण्डर ३) में भेजे जा रहे हैं।

M. S. GARG CALENDAR Mfg. CO.
(A) LAHORI GATE, DELHI.

पाँच हज़ार पृष्ठ के

उपन्यास १५) में

राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार के लिए हमने भारत के प्रसिद्ध दो लेखकों के अत्यन्त रोचक और भावप्रद राजनैतिक, सामाजिक, रहस्यमय जासूसी उपन्यासों का मूल्य काफ़ी घटा दिया है, जिससे गाँवों के छोटे छोटे पुस्तकालय भी लाभ उठा सकें। सर्व श्री बंकिम बाबू, शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय, प्रभावेदी सरस्वती, ओम् प्रकाश शर्मा, युगलकिशोर पांडे, स्वामी पारसनाथ सरस्वती आदि लेखकों के ५००० पृष्ठ के ५० के लगभग उपन्यास केवल १५) में भेजे जा रहे हैं। आज ही पत्र भेजकर उपन्यासों की सूची मँगावें।

गर्ग एण्ड को., ५६, लाहौरीगेट, देहली

सभी मंगल कार्योंमे
सुप्रसिद्ध सुगंधित
दसरा दर्बार
और
पुष्प रंजन
अगरवत्ति उपयोग कीजीये

PUSHPARANJAN
AGARBATHY

दि माडरन इन्डिया ट्रेडिंग कंपनि बेंगलोर-२.

स्वास्थ्यदायक

'जीवामृतम' का इस्तेमाल करने से दुर्बल देह को बल, दुर्बल वीर्य को पटुता, निद्राहीनों को चैन की नींद, मांस-पेशियों को पुष्टता, सुस्त लोगों को चुस्ती, भुलक्कड़ों को स्मरण-शक्ति, रक्तहीनों को नया रक्त, बदहज़मी से हैरान लोगों को अच्छी भूख, पीले देहवालों को तेज़, आदि असंख्य लाभ पहुँचते हैं। यह एक श्रेष्ठ टानिक है, जिसका औरत-मरद, सभी अवस्था-वाले हमेशा सेवन कर सकते हैं।

जीवामृतम

शरीर की दृढ़ता, शक्ति और ओज के लिए

आयुर्वेदाश्रमम् लिमिटेड्,
मद्रास - १७.

हमारे मित्र और हितदाताओं
को
दिवाली के हार्दिक अभिनन्दन !
दिवाली के इस शुभ अवसर पर हम आपको
आश्वासन देना चाहते हैं कि आपकी
छपाई के कार्य को—चाहे वह पुस्तक का
हो या पुस्तिका का, लिफ़ाफ़े का हो या
लेटरहेड—कार्ड का और लेबुल या
सन्तोषप्रद रूपसे सम्पन्न कर देंगे।
BNK PRESS LTD
PRINTERS
MADRAS, 26.

PP

संचालक : चक्रपाणी

हर वर्ष की तरह आपकी सेवा में हम इस वर्ष भी 'चन्दमामा' का विशेषांक प्रस्तुत कर रहे हैं। परन्तु इस वर्ष इसका कलेवर बड़ा है, बहुत मनोरंजक कहानियाँ दी गई हैं। पिछले कुछ महीनों से हम हास्य कहानियाँ और कई ऐसे स्तम्भ भी प्रकाशित कर रहे हैं, जो मनोरंजक भी हैं और उपयोगी भी।

"चन्दामामा" का पाठक-क्षेत्र निरन्तर बढ़ता जा रहा है। हम अपने पाठकों के सुझावों को ध्यान में रखते हुए आगे इसे और भी आकर्षक बनाने का प्रयत्न करेंगे! उड़िया और बंगला में भी शीघ्र ही "चन्दामामा" प्रकाशित होने लगेगा। आपके सहयोग में ही हमारी सफलता है।

नवम्बर
1955

वर्ष : 7
अंक : 3

गीध और उल्लू

कहा गीध से एक दिवस यह,
उल्लू ने आकरके तड़के—
"संधि करें आपस में दोनों,
रहें मित्र हम दोनों बनके!
प्रिय हों बच्चे मुझे तुम्हारे,
उनका बुरा न चाहूँगा मैं।
तुम भी अब से मेरे बच्चे,
कभी न मारो—चाहूँगा मैं!"
कहा गीध ने—"अच्छा भाई,
मंजूर तुम्हारी शर्तें हैं;
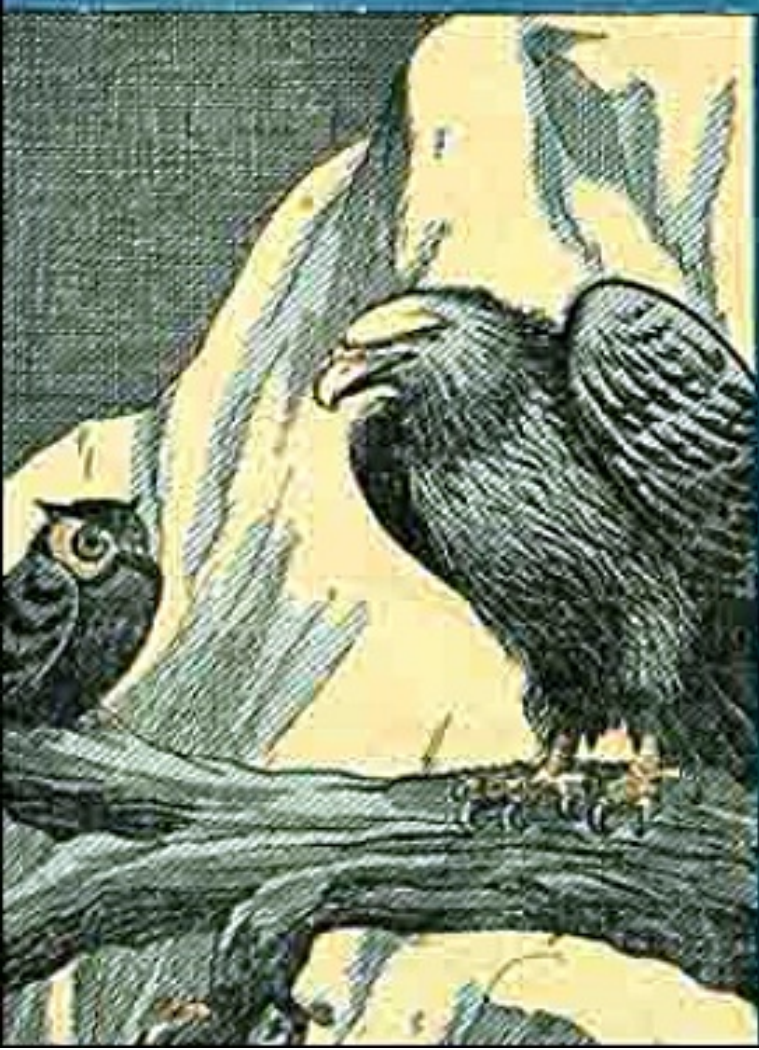
लेकिन मैं कैसे यह जानूँ,
कौन तुम्हारे ही बच्चे हैं?"

"तो सुन लो हुलिया उनका तुम,
बड़े निराले बच्चे मेरे;
ज्योति निकलती आँखों से है,
जगमग करते जैसे हीरे!

समता जिसकी नहीं धरा पर,
ऐसी ही प्यारी सुषमा है;
बेला के फूलों जैसी ही,
उज्ज्वलतम उनकी आभा है!"

यों समझौता हुआ उसी क्षण,
दोनों की थी निहित भलाई;

पर उल्लू ने मन में सोचा—
"इसमें मेरी अधिक भलाई!"

द्विवस दूसरा आया आखिर,
गीध बहुत ही हुआ क्षुधित जब,
उल्लू के बच्चों को उसने,
देखा कहीं बहुत विस्मित तब।

सोचा उसने मन में अपने—
'नहीं मित्र के बच्चे ये हैं;
उसके शिशु तो होंगे सुन्दर,
लेकिन निरे असुन्दर ये हैं!

फिर तो बिना हिचक के उसने,
उनको खाकर भूख मिटायी;

* * *

और चला फिर गया वहाँ से,
अपने घर की सुधि जब आयी।

हुई शाम जब लौटा उल्लू,
सूना नीड़ पड़ा था उसका;
अपने बच्चों को न देखकर,
फटने लगा कलेजा उसका।

रो-रोकर वह तो पछताया—
'अधिक मोहवश की यह भूल;
झूठा हुलिया यदि न बताता,
तो न खटकता उर में शूल!'

आज दिवाली फिर आयी है !

एक बरस के बाद आज यह,
आया है पावन त्योहार,
भेज रहे हैं सब मित्रों को,
सुन्दर और मधुर उपहार !

छूट रहे हैं कहीं पटाखे,
फुलझड़ियों की क्या ही शान,
'एटमबम' के सुनो धड़ाके,
काँप रहे निशिचर के प्राण।

जगमग दीपों की आभा में
खुशियाली घर घर छायी है!

मगन खुशी में नाच रहा है,
बच्चों का प्यारा संसार,
उमड़ पड़ा है भू पर मानों,
सुख का मधुमय पारावार !

चंदामामा नहीं गगन में,
सज आयी लेकिन बारात,
नभ में तारे भू पर दीपक,
हँसती है खिल-खिल यह रात।

जीवन के सूखे उपवन में,
हरियाली फिर से छायी है!

[बेबी 'संचिता']

काशी के राजा ब्रह्मदत्त के काल में बोधिसत्व एक बड़े रईस के घर में पैदा होकर बड़ा हुआ। शादी करके, घरवाला भी बन गया। थोड़े दिनों बाद उनके एक लड़का पैदा हुआ। उसी दिन, उस घर के एक दासी के भी एक लड़का हुआ। उसका नाम कटाहक रखा गया।

रईस का लड़का और कटाहक बड़े होने लगे। जब रईस का लड़का पढ़ने जाता, तो कटाहक उसके पीछे पीछे, उसकी पुस्तकें एक थैले में लेकर जाता। जो कुछ रईस का लड़का सीखता, कटाहक भी सीख लेता। कटाहक अच्छा पढ़ा-लिखा, अक्लमन्द समझा जाने लगा। शक्ल सूरत में, वह रईस के लड़के की तरह ही था। यह सब होते हुए भी, कटाहक को घर के नौकरों के साथ रहना पसन्द न था। उसने सोचा कि अपनी विद्या और अक्लमन्दी के बल पर क्यों न मैं एक अच्छा-सा स्थान कहीं जाकर बना लूँ! तब उसे एक अच्छा उपाय भी सूझा।

काशी के कुछ दूर प्रत्यन्त देश में बोधिसत्व का एक लखपति मित्र रहा करता था। उसने उस लखपति को इस तरह चिट्ठी लिखी, जैसे उसके मालिक ने स्वयं लिखी हो--

"मैं अपने लड़के को आपके पास भेज रहा हूँ। अच्छा होगा, अगर हम दोनों के घराने परस्पर और सम्बन्धित हो जायें। आप मेरे लड़के का अपनी लड़की से विवाह कर, उसको अपने यहाँ ही रख लीजिये। फुरसत मिलने पर मैं स्वयं आकर आपके दर्शन अवश्य करूँगा।"

' जातक कथा '

इस तरह चिट्ठी लिखकर, कटाहक ने उस पर अपने मालिक की भी ठोक दी। मालिक के ख़ज़ाने से इच्छानुसार पैसे लेकर, प्रत्यन्त देश में जाकर, लखपति के दर्शन कर उसको वह चिट्ठी दे दी। लखपति, चिट्ठी देखकर फूला न समाया। कटाहक के साथ उसने अपनी लड़की की शादी कर दी।

कटाहक के अब कितने ही नौकर थे। खाने-पीने और पहिनावे-पोशाक के बारे में उसको कितने ही देखभाल करनेवाले थे। मज़े से दिन कट रहे थे। परन्तु वह हमेशा यूँ कोसता रहता—"ये प्रत्यन्त देश के लोग कतई गँवार हैं। वे जानते ही नहीं हैं कि सभ्यता किसे कहते हैं। यह क्या भोजन है! ये कपड़े भी क्या हैं!"—हमेशा नौकरों को डाँटता-डपटता रहता और अपनी शान उनके सामने दिखाता।

इस बीच में बोधिसत्व को सन्देह हुआ कि कटाहक कहाँ था। उसका ठिकाना-पता किसी को न मालूम था। इसलिये उन्होंने उसको खोजने के लिये चारों ओर आदमी भेजे। उनमें से एक ने प्रत्यन्त देश में जाकर पता लगा लिया कि कटाहक एक लखपति की लड़की से यह कहकर कि वह फलाने काशी के रईस का लड़का है, विवाह कर आराम से रह रहा था।

यह पता लगते ही बोधिसत्व बहुत नाराज़ हुआ। वह स्वयं कटाहक को, प्रत्यन्त देश जाकर, लाने के लिये रवाना हुआ। यह जानते ही कि वे आ रहे हैं, कटाहक घबरा गया। उसने भागने की सोची; पर भागने से उसकी हानि ही होती, लाभ कुछ न था। इससे अच्छा तो यही है कि मालिक से जाकर पूरा हाल सुना दे।

मालिक के यहाँ आकर, स्वयं सब कुछ पता लगने से पहिले ही वह अपनी कहानी

उन्हें सुना, उनसे क्षमा माँगना चाहता था। हो सकता है कि मालिक के सामने नौकर की तरह रहने से, दूसरों को सन्देह हो जाये। इसलिये कटाहक ने अपने नौकरों से कहा—"मैं दूसरे लड़कों की तरह नहीं हूँ। मुझे अपने पिता के प्रति बहुत भक्ति है। जब मेरे पिता भोजन कर रहे होते हैं, तो पास खड़े होकर मैं पंखा झलता हूँ। मैं उनके लिए पीने का पानी आदि का भी प्रबन्ध कर देता हूँ।"

बाद में कटाहक ने अपने ससुर के पास जाकर कहा—"मेरे पिताजी आ रहे हैं; मैं जाकर उनको लिवा लाता हूँ।" लखपति उसका सुझाव मान गया।

कटाहक अपने मालिक से दूरी पर मिला और उनके पैरों पर पड़, उसने अपनी कहानी सुनाई। उनसे प्रार्थना की कि उसका कुछ बिगड़ने न दें। अभय भिक्षा माँगी। बोधिसत्व ने आश्वासन दिया कि वे उसका कुछ न बिगड़ने देंगे। कटाहक बोधिसत्व के साथ ही ससुर के घर गया।

लखपति बोधिसत्व को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और कहा—"आपके इच्छानुसार मैंने अपनी लड़की की शादी आपके

लड़के के साथ कर दी है।" बोधिसत्व ने ऐसा दिखाया, जैसे वह बहुत सन्तुष्ट हुआ हो। कटाहक से भी इस तरह बात की, जैसे वह सचमुच उनका लड़का हो। उसने लखपति की लड़की को बुलाकर पूछा भी—"क्यों बेटी! क्या मेरा लड़का तुम्हें ठीक तरह देख रहा है?"

"उनमें और तो कोई दोष नहीं है, पर जब वे भोजन के लिए बैठते हैं, तो उन्हें कोई पकवान भी पसन्द नहीं आता। चाहे कुछ भी बनाओ, नुक्ताचीनी करते ही रहते हैं। क्या करूँ, कुछ सूझ नहीं रहा है।"—कटाहक की पत्नी ने कहा।

"हाँ! हाँ! वह खाने के बारे में बहुत नखरेबाज़ी करता है। इसलिए, जब वह भोजन करने बैठे और नाक भौं चढ़ाकर कुछ कहना शुरू करे तो यह श्लोक सुनाना। यह श्लोक तुम्हें लिखकर दूँगा, तुम उसको कंठस्थ कर लेना।" बोधिसत्व ने उसको एक श्लोक लिखकर दिया।

बोधिसत्व काशी नगर वापिस चला गया। कटाहक और भी ढोंग-दिखावा करने लगा। बढ़-चढ़कर रहने लगा। जो कुछ भोजन में परोसा आता, वह उसकी बुराई करता। तुरंत उसकी पत्नी ने यह श्लोक पढ़ा।

बहुम्पिसो विकत्थेय्य अञ्ञ जनपदं गतो
अन्वागन्त्वान दूसेय्य भुञ्ज भोगे कटाहक

(कटाहक स्वयं गालियाँ सुनकर दूसरी किसी जगह में जाकर अब दूसरों को गाली देता हुआ सब सुखों का अनुभव करेगा)

इसका अर्थ उसकी पत्नी को न मालूम था। परंतु कटाहक जान गया कि उसका मालिक नाम के साथ उसकी सारी पोल खोल गया है। इसलिए उसे जो कुछ परोसा आता, चुपचाप खा लेता। उसके बाद वे दोनों बड़े सुख से रहने लगे।

[४]

[जब उसका महल कुण्डलिनी सैनिकों के हाथ आ गया तो मन्दरदेव अपने चार सैनिकों को लेकर, नौकाओं में, समुद्र में निकल गया था। उसका कुछ और लोगों से युद्ध भी हुआ, जो उनकी तरह नाव में चले आ रहे थे। उनमें शिवदत्त भी था। मन्दरदेव ने उससे कुण्डलिनी द्वीप की परिस्थितियों के बारे में पूछा। बाद में....]

शिवदत्त की बातें सुनकर मन्दरदेव को बहुत आश्चर्य हुआ। उसे यह समझ में न आया कि इतना अक़्लमन्द, अनुभवी, समझदार समरसेन राज्य-पालन में इतनी ग़ल्तियाँ कैसे कर बैठा। वह न जाने, कहाँ कहाँ गया, न जाने उसने कितनी ही बहादुरी के काम कर, कितनी धन-सम्पदा एकत्रित की थी। पर ऐसा लगता है कि उन सब बातों से कुण्डलिनी देश के निवासियों की किसी प्रकार की भलाई नहीं हुई, बल्कि हानि ही अधिक हुई।

"शिवदत्त! मैं तो यह सोच रहा था कि समरसेन द्वारा मांत्रिकों के द्वीप से लाई हुई, धन-धान्यों से भरी नाव के कारण आपके देश के वासी सुखी और सम्पन्न हैं।"—मन्दरदेव ने कहा।

शिवदत्त ने अट्टहास करके कहा—"मन्दरदेव! वह धन-सम्पदा ही वस्तुतः

कुण्डलिनी द्वीप की अराजकता के कारण बनी। जब हम उस नाव में कुण्डलिनी द्वीप पहुँचे तो राजा चित्रसेन और जनता ने हमारा बड़ा स्वागत किया। एक महीने तक शहर में जलसे-जुलूस निकलते रहे। चित्रसेन ने सारे कर रद्द कर दिये। राज्य कर्मचारियों के वेतन दुगने कर दिये गये। लोगों को दान-दक्षिणाएँ दी गईं।"

"राज्य में हरेक ने बड़ा सुख अनुभव किया होगा।"—मन्दरदेव ने कहा। "मन्दरदेव! ध्यान से सुनो, बताता हूँ।" शिवदत्त ने कहना शुरू किया—"जब खज़ाना धन आदि से भर गया, तभी चित्रसेन शासन के बारे में लापरवाह हो गया। समरसेन ने सोचा—"इतना धन लाया हूँ। अब लोगों को किसी चीज़ की कमी न होगी।"

"मैंने बताया था न कि राजा चित्रसेन ने राज्य के कर्मचारियों के वेतन दुगने कर दिये थे! अधिक पैसा मिलने पर वे विनोद में मस्त रहने लगे और जब लोगों पर कर देने की जिम्मेवारी न रही, तो वे खेती-बारी करने में उदासीन-से हो गये। जितनी अनाज की ज़रूरत होती, उतना पैदा कर लेते, और बाकी ज़मीन खाली छोड़ देते और वे आलसी भी बन रहे थे।

इस तरह जो अनाज-गल्ला शहर जाता था, वह जाना बन्द हो गया। इसलिए शहर के लोग, झुण्ड झुण्ड बनाकर गाँवों में जाने लगे, और आनाज को दुगने-तिगुने दामों पर खरीदने लगे। किसान को अधिक रुपया मिलने पर यह न सूझा कि क्या खरीदें, इसलिए आनाज, शाक-सब्जी—सभी चीज़ों के दाम बढ़ गये। देश में एक विचित्र रीति पैदा हो गई।

धीमे धीमे राज्य में अराजकता फैलने लगी। जो शहर के लोग अनाज के

लिए अधिक दाम दे न पाते थे, वे टोलियाँ बनाकर, रात के समय गाँवों पर धावा बोलने लगे। यह देखा-देख गाँववाले ने अनाज का दाम सोना जितना कर दिया। वे भी टोलियाँ बनाकर अपनी आत्म रक्षा के लिये सन्नद्ध हो गये।

भोग-विलास में मस्त चित्रसेन को बदलती परिस्थितियों के बारे में कुछ न मालूम था। सच कहा जाय तो न समरसेन को, न मुझे ही कुछ मालूम हुआ। हमें नहीं मालूम था कि देश के किस कोने में क्या हो रहा था। हम इस ख्याल में मस्त थे कि सम्पन्न देश में कोई भी गड़बड़ी नहीं हो सकती।

यद्यपि ख़ज़ाने से, लोगों को पैसा इस तरह दिया जा रहा था, जैसे वह पानी हो, फिर भी ऐसे लोगों की कमी न थी, जो पैसे के लिये मोहताज थे। क्योंकि अनाज और अन्य चीज़ों का दाम हज़ार गुना, दो हज़ार गुना बढ़ गया था। इसलिए चाहे कितना भी धन हो, काफ़ी न होता था। फिर जिन विनोद, खेल-खेलवाड़ों की व्यवस्था की थी, उनके बारे में तो कहना ही क्या! बड़ी अजीब व्यवस्था थी। सारा वातावरण

बदल गया था। राजा और जनता अत्यन्त बेफ़िक्र हो गये थे।

हर रोज़, राजमहल में, कोई न कोई मनोरंजन का कार्यक्रम रहता। अब उन मनोरंजनों के बारे में सोचने पर शर्म आती है। पर तब हमने ख्याल भी न किया, उसक क्या दुष्परिणाम होगा।

जङ्गल में से एक क्रूर शेर को पकड़कर, लोहे के सीखचों से घिरे मैदान में छोड़ दिया जाता था। जो कोई उसको—सिर्फ़ भाला लेकर मार देता, उसको शेर के वज़न के बराबर सोना दिया जाता। धन के लालच से शेर से लड़ने के लिए कई साहसी नवयुवक आते और जिनका भाग्य साथ देता, वे शेर के साथ लड़कर खूब धन कमा कर चले जाते।

होते होते ये सिंह-युद्ध बहुत ही भयंकर और असभ्य हो गये। कभी हाथी और शेर का युद्ध होता; कभी हाथी हाथी का, कभी कुछ, तो कभी कुछ और। मैंने समरसेन से इस क्रूरता के बारे में कहकर भी देखा। पर उसे नरवाहन मिश्र की बात पर अधिक विश्वास था, जो उसके साथ मांत्रिकों के द्वीप में घूमा-फिरा था।

"खज़ाने में धन की कोई कमी नहीं है। राजा बूढ़ा है। यह भी उसकी जिम्मेवारी है कि देश के लोगों को बहादुर और साहसी बनाये। उस हालत में अगर राजा इस तरह के मनोरंजनों की व्यवस्था करता है तो इसमें ग़लती क्या है!"—समरसेन अक्सर कहा करता।

जब राजा और राज-कर्मचारी मनोरंजनों में मस्त थे, तो गाँवों में विचित्र विचित्र परिवर्तन होने लगे। हर ताकतवर आदमी, जिसकी थोड़ी बहुत धाक थी, जिसकी लाठी उसकी भैंस थी। स्वयं एक छोटा मोटा

राजा हो गया। लोग कुछ अनुयाइयों को इकट्ठा करते, और पासवाले गाँव पर धावा बोल देते, और उन्हें अपने आधीन कर लेते। तब की यह थी हालत।"

इस प्रकार, एक ही राज्य में कई छोटे छोटे राज्य बन गये। राजा का और प्रजा का सम्बन्ध भी शिथिल हो गया। न राजा को इस बारे में कुछ मालूम था, न उसके कर्मचारियों को ही। मैं जानता था कि इसका बुरा नतीजा होगा, पर मेरी बात पर किसी ने ध्यान न दिया। देश में—व्यापार, खेती वगैरह सब चौपट हो गई। डाकू-डकैतों के गिरोह शहर और गाँवों को, मौके-बेमौके लूटने लगे। धीमे-धीमे यह नौबत आई कि चित्रसेन का शासन उसके राजमहल तक ही सीमित रह गया। देश में उसको पूछने वाला कोई न था। जहाँ कहीं भी देखो, नये नये राजा—महाराजा दिखाई देने लगे। न कोई कानून था, न शासन ही।

एक दिन शाम को जब चित्रसेन अपने मनोरंजन में मस्त था, एक दूत ने आकर उसके हाथ में एक चिट्ठी दी। राजा ने समरसेन को, जो पास में बैठा था, चिट्ठी पढ़ने के लिए दी। समरसेन उसे पढ़ते ही तिलमिलाने लगा। उसको काटो तो खून नहीं। मैं झट जान गया कि हो, न हो कोई खतरा आ पड़ा है।"

"महाराज! मैं चाहता हूँ कि मनोरंजन का कार्यक्रम समाप्त कर आप राज-महल में आयें। आपसे राज्य सम्बन्धी कुछ बात करनी है। बहुत जरूरी बात है।"—समरसेन ने कहा। चित्रसेन ने, लाचारी से मेरी ओर समरसेन की ओर देखा। फिर वहाँ से उठकर वह चल दिया। मैं जा ही रहा था कि समरसेन ने मुझे रोककर कहा—"शिवदत्त! तुम भी आओ। हम तीनों

चलें।" समरसेन ने दूत की लाई हुई चिट्ठी को हमें देते हुये कहा—

"हम अब तक आँखें मींचे बैठे थे। इस कुण्डलिनी द्वीप में, बिना हमारे ज्ञान के, कई राजा-महाराजा बन बैठे हैं। उन लोगों ने हमें ही चुनौती दी है। कहते हैं कि वे असमर्थ राजा को हटाना चाहते हैं। राज-महल और क़िला वे अपने वश में करना चाहते हैं और राजा उनके सामने झुक जाय।"

तब भी चित्रसेन की मस्ती दूर न हुई— वह अपने नशे में ही रहा। बड़ी बड़ी आँखों से इस तरह समरसेन की तरफ़ उसने देखा, जैसे अभी सोकर उठा हो। पैर ठोंकते हुए उसने कहा—"समरसेन! मालूम होता है, राज्य की परिस्थिति बहुत गिर गई है। इन घमंडी लोगों को दबाना ही होगा। दूसरों को भी सबक सिखाना होगा। इसलिये उनके सरदारों को पकड़कर उनकी बोटी बोटी कटवा दो। एक भी न बचने पाये।"

"अच्छा महाराज! फिर मिलूँगा।" कह, समरसेन कमरे में से बाहर चला गया। मैं भी बिना कुछ कहे, उसके पीछे थोड़ी दूर तक चला। तब समरसेन ने यकायक एक जगह रुककर मुझ से यों कहा—

"शिवदत्त! तुम्हारी इस बारे में क्या राय है?" सहसा इस तरह पूछने से मैं हैरान रह गया। मुझे सिवाय इसके कि देश में अराजकता फैली हुई थी, और कई लोग अपनी अपनी धाँधली चला रहे थे, कुछ न मालूम था। जब मुझे पता लगा कि महाराज से लोहा लेने के लिए ही कुछ लोग तैयार हो गये हैं, तो मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही। परन्तु मैं इतना ज़रूर ताड़ गया कि देश की परिस्थितियों के बारे में जितना मैं जानता था, उतना समरसेन नहीं जानता था। वह तो बेख़बर था।

"मुझे लगता है कि शत्रु बलशाली है। अगर वे बलशाली न होते तो नगर पर वे यकायक हमला न कर देते। अगर अब वे चुनौती देकर आ रहे हैं, तो आप आसानी से अनुमान कर सकते हैं।"—मैंने कहा।

समरसेन दो-तीन मिनिट तक न बोला। फिर सिर हिलाते हुए उसने कहा—"शिवदत्त! जो तुम कह रहे हो, उसमें ज़रूर सचाई है। फिर भी हमारे पास सुशिक्षित सेना है; अनुभवी, समर्थ, वफ़ादार सरदार हमारे हैं। इन देश-द्रोहियों का नामो-निशान मिटाने के लिए अधिक समय न लगेगा।"

समरसेन का, "वफ़ादार सरदार" कहने का क्या मतलब था, मैं जान गया। वे वही थे, जो उसके साथ मांत्रिक द्वीप गये थे, और जिन्होंने वहाँ हर तरह की मुसीबतें झेली थीं। उनमें मुख्य नरवाहन मिश्र ही था।

"ख़ैर, इन बाग़ियों को जितनी जल्दी क़ाबू में लाया जाय, उतना ही अच्छा। सेना को तैयार रहने के लिए कहो। आपके नेतृत्व में मैं मुश्किल से मुश्किल काम भी कर सकता हूँ।"—मैंने कहा।

समरसेन ने मुझ पर आश्चर्य करते हुए कहा—"इस छोटे से कार्य के लिए तुम्हारा या मेरा सरदार बनकर जाना हास्यास्पद है। वफ़ादार, बहादुर नरवाहन मिश्र को यह काम सौंपने का मेरा विचार है।"

नरवाहन मिश्र के बारे में मैंने तभी कुछ बातें सुन रखी थीं। उसकी हरकतों के बारे में मुझे बहुत दिनों से सन्देह हो रहा था। परंतु इस हालत में, उसके बारे में समरसेन से कहना, मुझे अच्छा न लगा। अब भी मैं सोच रहा हूँ कि बताया जाय कि नहीं। (अभी और है)

मन्दपाल सानुमन्त देश का राजा था। बहुत दिनों बाद उसके एक लड़की हुई। उसका नाम माँ-बाप ने मालती रखा। जब वह लड़की पैदा हुयी तो उन्हीं दिनों, वहाँ एक दूर देश का ज्योतिषी आया हुआ था। उस ज्योतिषी ने जन्म का समय पता लगाकर, उसकी जन्म-पत्री लिखी। कुछ दिनों बाद वह कहीं और चला गया।

जब मालती सोलह वर्ष की हो गई तो उसका विवाह करने से पहिले, राजा ने उसकी जन्म-पत्री जाननी चाही। जन्मपत्री की भाषा को ठीक तरह समझनेवाला उस समय उसे कोई न मिला। एक पंडित ने बहुत माथापच्ची के बाद, जन्म-पत्री पढ़कर बताया—"महाराज! इस जन्म-पत्री में स्पष्ट लिखा है कि राजकुमारी के दो विवाह होंगे। पति विवाह के दिन ही दिवंगत हो जायेगा। यह भी लिखा है कि इसका पति चक्रवर्ती होगा। मुझे ठीक तरह पता नहीं लग रहा है। शायद यह हो कि पहिले पति के मर जाने के बाद दूसरा पति चक्रवर्ती हो।"

मन्दपाल ने पहिले ही अपनी लड़की का इन्द्रदत्त से विवाह निश्चित कर रखा था। अगर भाग्य ने साथ दिया तो इन्द्रदत्त चक्रवर्ती हो सकता था। परन्तु लड़की की जन्म-पत्री में दो विवाह थे। इसलिए उसने इन्द्रदत्त से शादी करने से पहिले, मालती की किसी और से शादी करने की ठानी। उसने अपने मन्त्रियों को भी यही बताया।

उन दिनों सानुमन्त शहर में कहीं से तीन पागल आये हुए थे। एक कहा करता—

कुमारी उषा भटनागर

"सब अजीब है।" दूसरा—"दैवायत्तं" चिल्लाता। तीसरा कहता—"कोई किसी का नहीं है।" ये पागल इसके सिवाय कुछ न कहते। दिन भर शहर में यह ही बकते फिरते। कोई भोजन देता तो खा लेते। शाम होते होते मन्दिर में आकर, मण्डप में सो जाते।

मन्त्रियों ने राजा को यह बात सुनायी। उनमें से एक ने कहा—"महाराज! आज हम राजकुमारी को दुल्हिन बनाकर, मन्दिर ले जायें, जैसे पूजा करने के लिए जा रहे हों, और वहाँ ईश्वर के समक्ष, उनमें से एक पागल के साथ, चुपचाप राजकुमारी का विवाह कर दें। बाद में असली विवाह तो होगा ही। इस तरह करने से जन्म-पत्री में लिखा हुआ दोष हट जायगा, और सुख से विवाह भी हो जायगा।"

जब सारा शहर सो रहा था तो मालती को दुल्हिन बनाकर वे मन्दिर में ले गये।

"मण्डप में सोये हुए किसी एक पागल को उठा लाओ।"—मन्त्री ने सैनिकों से कहा। सैनिक पागलों में सब से छोटे पागल को उठाकर ले आये। वह "दैवायत्तं" कहनेवाला पागल ही था।

पुरोहित ने जल्दी जल्दी दो-चार मंत्र पढ़े और मालती की "दैवायत्तं" कहनेवाले पागल के साथ शादी कर दी थी। तब मालती को दरबारी वापिस ले गये। पागल फिर जाकर मण्डप में सो गया।

अगले दिन ही असली विवाह था। बड़े धूमधाम से विवाह हुआ। परंतु न जाने क्या मालती को यह विवाह नकली लग रहा था और उसको मन्दिर में किया गया विवाह ही असली मालूम हो रहा था। उस दिन दरबार में जो गुल्छर्रे उड़े, उनकी हद ही न थी। दिन भर दावतें होती रहीं,

नाच-गाना चलता रहा। दावत खाते खाते दूल्हा यह कहकर चला गया कि उसकी तबीयत ठीक नहीं है। थोड़ी देर बाद ही उसको मूर्छा-सी आई, और उसी मूर्छा के कारण वह मर भी गया। जहाँ शादी की खुशियाँ मनाई जा रही थीं, वहाँ मातम मनाया जाने लगा।

यह देख मन्दपाल भी मूर्छित सा हो गया। मन्त्री ने विवाह के लिए निमन्त्रित एक दाक्षिणात्य पंडित के पास जाकर मालिती की जन्म-पत्री दिखाई। पंडित ने जन्म-पत्री पढ़कर कहा—"इस लड़की का दूसरा पति मर जायेगा, और पहिला चक्रवर्ती बनेगा।"

मन्त्री घबराया हुआ, भागा भागा राजा के पास गया, और उसने उनसे यह बात कही। "मेरे पास ज्योतिषियों और जन्म-पत्रियों के बारे में कुछ न कहो। ये ज्योतिषी भूत तो ठीक बताते हैं, पर जब भविष्य के बारे में बताना होता है तो बगलें झाँकने लगते हैं। यह पागल क्या चक्रवर्ती बनेगा!"—राजा ने गुस्से में कहा।

मन्त्री ने यह जानने के लिये कि वे पागल हैं या चले गये हैं, मन्दिर की ओर

आदमी दौड़ाये। उन लोगों ने आकर बताया कि वहाँ कोई न था। अन्तःपुर में मालती भी न दिखाई दी। किसी को न मालूम था कि वह राजमहल से कब गई और कहाँ गई।

यह पता लगते ही कि इन्द्रदत्त की मौत हो गई है, मालती को वैराग्य-सा हो गया। उसने अपने रेशमी कपड़े उतार दिये, और गेरुआ पहिन लिया। और अन्धेरे में ही वह मन्दिर की ओर चली गई। पागल कहीं जाने की तैयारी कर रहे थे। मालती भी उनके पीछे पीछे ही चल दी।

पागल, जङ्गल, गाँव, कस्बों में से होते होते बहुत दिनों बाद जयन्त नगर में पहुँचे। मालती भी उन्हीं के पीछे पीछे चलती जाती। जब वह रुकते, वह भी रुकती; जहाँ उनको खाना मिलता, वह भी खाना पाती।

जयन्त नगर में बड़ा शोर-शराबा हो रहा था। उस नगर का राजा विजयवर्धन था। उसका एक ही एक लड़का था, और वह भी वैरागी हो गया था। उसने विवाह न करना चाहा था। अब शहर में यह खबर आई थी कि वह कहीं मर गया था। इसलिए अपना उत्तराधिकारी चुनने के लिए, वह एक हाथी को सजा-धजा कर, शहर में छोड़ रहा था। हाथी जिस पर सूँड़ उठायेगा, वही उत्तराधिकारी समझा जायगा। यह सब मालती ने लोगों को कहते-सुनते जान लिया।

गलियों में भीड़ लगी हुई थी। हर कोई सोच रहा था कि हाथी उसी पर सूँड़ झुकायेगा। हाथी के आने से पहिले—सैनिकों ने लोगों का चलना-फिरना बन्द कर दिया। उनको एक किनारे खड़ा कर दिया। पागलों के साथ मालती भी खड़ी हो गई।

इस बीच में, लोगों में हलचल शुरू हो गई। हाथी उसी गली में आ रहा था। ज्यों

ज्यों वह पास आता जाता था, लोगों में शोर भी बढ़ता जाता था। हाथी सीधा उस जगह आया, जहाँ पागल खड़े थे। उसने "दैवायत्तं" कहनेवाले पागल पर सूँड़ झुकाई। लोग काठ की तरह स्तब्ध खड़े हो गये।

हाथी पर चढ़े मन्त्री ने नीचे उतरकर उस पागल की ओर गौर से देखा। "महाराज, आप ही हैं! क्या भाग्य है! मैं भी न पहिचान सका, पर बेज़बान इस हाथी ने आपको पहिचान लिया है!"—कहते कहते मन्त्री ने नमस्कार किया। "दैवायत्तं" कहकर वह पागल हँस दिया था।

सचमुच वह पागल न था। वह वस्तुतः उस देश का युवराज भूपालदेव ही था। कुछ दिनों पहिले उसमें और मन्त्री में कुछ अनबन हो गई थी। मन्त्री ने उससे विवाह करने के लिए कहा, उसने करने से इनकार कर दिया। "अगर भाग्य में लिखा हो तो क्या आप टाल सकते हैं?"—मन्त्री ने कहा।

"सब कुछ मनुष्य के अधीन है—दैव या भगवान के अधीन कुछ नहीं है।"—युवराज ने कहा था।

एक दिन जयन्त नगर में कोई योगी आया। वह बहुत प्रतिभाशाली लगता था,

इसलिए मन्त्री उसको दरबार में ले गया। योगी और युवराज में बहुत देर तक वाद-विवाद होता रहा। योगी चला गया। और उसी दिन से युवराज भी पागल की तरह "दैवायत्तं" कहता कहता, देश-विदेश घूमने लगा। कुछ दिनों तक उसका ठिकाना भी किसी को न मालूम था।

जब भूपालदेव "दैवायत्तं" कहता कहता इधर उधर फिर रहा था, तो उसको दो पागल और मिले। उनमें से एक जो यह कहता था—"सब अजीब है!" वह एक उच्च कुल का ब्राह्मण था। पत्नी को व्यभिचार करता देख, वह पागल हो गया था। दूसरा किसी बनिया लखपति का लड़का था। उसने देखा कि उसके सब सगे-सम्बन्धी उसकी मौत की इन्तज़ारी कर रहे थे, ताकि वे उसका धन हड़प सकें। वह भी पागल हो गया। और "कोई किसी का नहीं है" कहता कहता इधर उधर फिरने लगा। ये तीनों अब तक एक ही साथ थे।

"मन्त्री, जो तुमने कहा था, वही हुआ। भगवान के अधीन होने के कारण मेरा विवाह भी हो गया है। अगर आपको मेरी बात पर विश्वास न हो तो हमारे साथ आनेवाली इस योगिनी से पूछ लीजिये।"—भूपालदेव ने कहा।

तब मालती को मालूम हुआ कि "दैवायत्तं" कहनेवाला ही उसका पति था। मन्त्री ने उसको नमस्कार किया, और युवराज और युवरानी को हाथी पर चढ़ाकर राज-महल में ले गया।

मालती न केवल चक्रवर्ती की पत्नी ही बनी, अपितु वह अपने पति के साथ सुख से रहकर, कई बाल-बच्चों की माँ भी हुई।

कुछ का कुछ

विक्रमार्क बहुत ही हठी था। प्रश्न का उत्तर देने के कारण उसका मौन-व्रत भंग हो गया था, और शव के साथ वेताल फिर पेड़ पर आ बैठा था, यह विक्रमार्क जान गया था। वह फिर वापिस चला। पेड़ पर से शव को उतारा, और कन्धे पर डाल, वह श्मशान की ओर जाने लगा।

"राजा—तुम बहुत ज्ञानी हो। तुम से पूछकर मैं अपना एक और सन्देह दूर करना चाहता हूँ। पहिले यह कहानी सुनो।" कहते हुये वेताल ने यह कहानी सुनाई—

"शोभावती नगर में काली का एक मन्दिर है। हर साल आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशी के दिन वहाँ एक बड़ा मेला लगता है। दूर दूर से लोग वहाँ आते हैं, तालाब में स्नान कर, काली माई का दर्शन कर जाते हैं।

वेताल कथाएँ

एक साल ब्रह्मस्थल नामक गाँव से धवल नाम का धोबी काली माई का दर्शन करने आया। उसने तालाब में नहाते हुये मदन सुन्दरी नाम की एक धोबी-कन्या को देखा। वह भी काली दर्शन के लिये आई हुयी थी। उसने उसके नाम, गाँव, पिता का नाम आदि के बारे में भी पता लगाया। उसने सोचा कि जब तक वह उस कन्या से विवाह नहीं कर लेगा, तब तक भोजन का एक कौर भी नहीं लेगा।

मेले के बाद धवल को दिन प्रति दिन कमज़ोर होता देख, उसके पिता ने उसकी कमज़ोरी का कारण पूछा। धवल ने मदन सुन्दरी के बारे में सब कुछ कह सुनाया।

"अरे बेटा! इस छोटी-सी बात के लिये ही तुम खाना-पीना छोड़ बैठे थे! उसका पिता मेरा मित्र ही है। अभी जाकर विवाह निश्चित किये देता हूँ। तुम उठो, भोजन करो।"—उसके पिता ने कहा।

शुभ मुहूर्त में धवल और मदन सुन्दरी का विवाह हो गया। धवल पत्नी को घर लाकर आराम से रहने लगा।

इस बीच में धवल के साले ने उसके घर आकर कहा—"हम अपने घर में गौरी व्रत कर रहे हैं। तुम्हें और बहिन को ले जाने के लिये आया हूँ।"

अगले दिन ही धवल, पत्नी और साले के साथ, ससुराल के लिये निकल पड़ा। रास्ते में शोभावती नगर पड़ता था। धवल को माई के दर्शन करने की इच्छा हुई। जब उसने साले और पत्नी को बुलाया तो उन्होंने खाली हाथ माई को देखना अच्छा न समझा, धवल अकेला ही मन्दिर में गया।

मन्दिर में, काली माई को देखते ही धवल भक्ति के कारण मूर्छित-सा हो गया। अठारह हाथोंवाली काली माई, महिषासुर

को पैरों तले रौंदती हुई एक विजेता के समान उसको दिखाई दी। काली माई की मूर्ति के पास ही एक गंड़ासा था।

"इस देवी को हर कोई बलि देकर पुण्य कमाता है, मैं अपने को ही बलि देकर मोक्ष पाऊँगा।" यह सोच धवल ने गंड़ासा उठाया और अपना सिर स्वयं काटकर मूर्ति के सामने रख दिया।

पति को आता न देख पत्नी ने भाई को भेजा। जब वह मन्दिर में गया तो उसने देखा कि बहनोई ने अपने हाथों मूर्ति के सामने अपने को बलि कर दिया था। उस में एक प्रकार का भक्ति-आवेश पैदा हुआ। उसने भी गंड़ासे से अपना गला काटकर, अपने बहनोई के सिर के पास ही रख दिया।

मदन सुन्दरी ने उन दोनों की बहुत प्रतीक्षा की। जब वे न आये, तो वह स्वयं हैरान होकर मन्दिर में गई। वहाँ अपने भाई और पति का सिर पड़ा देखकर, उसने दुःखित हो कहा—"माई! क्या तूने मेरे भाई और पति को एक साथ ही बलि ले लिया है? अब मेरे जीने से भी क्या फ़ायदा! मैं तेरे सामने ही फाँसी लगाकर

मर जाऊँगी।" उसने आत्म-हत्या करने का प्रयत्न किया। तब उसको देवी के मुख से ये शब्द सुनाई दिये—

"अरी पगली! आत्म-हत्या न कर। मैंने न तेरे पति की बलि माँगी थी, न तेरे भाई की ही। उन्होंने अपनी भक्ति में अपने आप को बलि दे दिया है। उनके धड़ के पास सिर रख, मैं उनको अभी जिला देती हूँ।"

भाई के शब्द सुनते ही मदन सुन्दरी बहुत ही प्रसन्न हुई। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे। उसने आँसू पोछते पोछते मन्दिर के अन्धेरे में, सिरों को धड़ के पास रखा। वे तुरंत जीवित हो उठे। पर एक गलती हो गई थी। मदन सुन्दरी ने अपने पति का सिर भाई के धड़ पर रख दिया था, और भाई का सिर पति के धड़ पर। वे उसी तरह जीवित हो गये थे।"

यह कहानी सुना बेताल ने पूछा—"राजा मेरा संदेह यह है कि मदन सुन्दरी का सचमुच पति कौन है? और भाई कौन है? अगर तुमने इसका उत्तर जानते हुये न दिया, तो तुम्हारा सिर फोड़ दूंगा!"

"इसमें किसी सन्देह की गुंजाइश ही नहीं है। सारे शरीर में सिर ही प्रधान है। इसलिये पति के सिरवाला ही पति है। भाई के सिरवाला भाई"—विक्रमार्क ने उत्तर दिया।

राजा का मौन इस तरह भंग होते ही—बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। विक्रमार्क फिर वापिस गया। पेड़ पर से शव को उतारकर कन्धे पर डाल फिर एक बार श्मशान की ओर चल पड़ा।

"राजा! तुम्हारा परिश्रम ज़रूर सराहनीय है। मुझे एक और सन्देह हो रहा था। अब मेरा संदेह हट गया।"

राजा की खोज

मालव देश में सुदर्शन नाम का एक नवयुवक रहा करता था। शक्ल-सूरत में वह कामदेव को मात करता था, पर वह बहुत ग़रीब था। उसने अध्ययन में सारा बचपन काशी में काट दिया था, शिक्षा की पूर्ति के बाद वह शास्त्र की पोथियाँ लिये घर वापिस लौट रहा था।

पड़ाव करता करता, एक दिन सुदर्शन एक छोटे-से राज्य में पहुँचा। उस राज्य का नाम पुरन्दर था। शहर में पहुँचते पहुँचते काफ़ी अन्धेरा हो गया था। अन्धेरे में उसने इधर उधर भटकना न चाहा। सीधे राजा के पास जाकर उसने कहा—"मैं परदेशी हूँ। अतिथि हूँ। भोजन और सोने की जगह दीजिये सवेरा होते ही मैं अपने रास्ते आप चला जाऊँगा।"

पुरन्दर राजा उसके सौंदर्य और तौर-तरीके को देखकर मान गया। सुदर्शन के जाने के बाद, रानी ने राजा से कहा—"उस लड़के ने कपड़े तो मामूली ही पहिन रखे हैं, पर लगता है, जैसे वेष बदलकर कोई चक्रवर्ती का लड़का आया हो। आप ज़रा उसके बारे में सोचिये, मौका लगा तो लड़की की शादी उससे कर देंगे।"

"जो वेष बदलकर घूम रहा है, क्या वह हमारे पूछने पर सच कहेगा? मन्त्री से पूछ-ताछ कर कुछ करेंगे।"—राजा ने कहा।

मन्त्री ने सब सुनकर कहा—"लड़का राजा है कि नहीं, आसानी से जाना जा सकता है। परंतु एक रात में पता नहीं लगेगा। इसलिये कम से कम उसे दो-तीन दिन तक यहाँ ठहराइये।"

श्री सुरेशचन्द्र अग्रवाल

"सुदर्शन भोजन कर अपने सोने के कमरे में गया। दरवाज़े की चटखनी लगाकर, उसने कुरता उतारा। तुरंत कुरते की जेब से दो तीन मुट्ठी चने, बिस्तरे पर, इधर उधर फ़र्श पर गिर गये। वह ग़रीब था, समझदार भी। कहीं ऐसा न हो कि कभी असमय में ही व्रत करना पड़ जाये, उसने रास्ते में चने तोड़ लिये थे, और छिल्के निकालकर जेब में रख लिए थे। पर वह उनके बारे में कतई भूल गया था।

चनों के इधर उधर बिखर जाने से सुदर्शन के सामने एक समस्या पैदा हो गई। राजा उसका इस प्रकार आतिथ्य कर रहा था, जैसे वह बड़ा आदमी हो। नौकरों ने वहाँ चने बिखरे देख अगर राजा तक ख़बर भिजवा दी, तो उसको नीचा देखना होगा। इसलिए सुदर्शन एक एक करके चने उठाने लगा, उसने बिस्तर भी झाड़ा। चने चुनते चुनते आधी रात हो गई।

भोजन करते समय राजा ने सुदर्शन से कहा—"तुमने कहा था कि कल सबेरे ही तुम चले जाओगे। परन्तु हम तुम्हें यों जाने नहीं देंगे। कल हमारी इन्दुमति का जन्म-दिन है। कल यहीं रहो।" "जैसी आपकी इच्छा!"—सुदर्शन ने कहा।

इस बीच में, मन्त्री ने एक कमरे में, सुदर्शन के लिए एक मामूली-सा बिस्तर बिछवा दिया। एक सिपाही को बुलाकर उसने कहा—"तुम यहीं कमरे के बाहर रात भर पहरा दो, और यह देखते रहो कि अतिथि आराम से सोता है कि नहीं!"

चनों को जेब में रखना अक़्लमन्दी का काम न था। इसलिए यद्यपि उसको भूख न थी, वह चने खाने लगा। जब वह सोया तो सबेरा होने को था। अगले दिन सबेरे मन्त्री ने सिपाही को बुलाकर

पूछा—"क्यों! क्या वे रात को ठीक तरह सोये थे! तुमने क्या देखा!"

"हुजूर! रात भर वे सोये ही नहीं। मैं भी न सोया। वे इधर उधर घूमते ही रहे। मैंने उनको बिस्तर झाड़ते भी सुना। मैं तीसरे पहर कहीं जाकर सो सका। वे कब सोये, मैं नहीं जानता हूँ।"—पहरेवाले ने कहा।

मन्त्री ने राजा के पास जाकर कहा—"महाराज! हमारे अतिथि बहुत ही नाजुक हैं। मैंने रात में जो उन के लिए बिस्तरा लगवाया था, वे मामूली आदमी होते तो आराम से सो गये होते। उस पर कोई चक्रवर्ती के लड़के ही सो सकते हैं।"

चनों से उसने पेट भर लिया था, इसलिए अगले दिन दावत में सुदर्शन कुछ भी न खा सका। उसने पकवान छुये तक नहीं। यह देख राजा और रानी को मन्त्री की बात पर और भी विश्वास हो गया।

अगले दिन मन्त्री ने सुदर्शन के लिए शानदार, गद्देदार बिस्तरा लगवाया। पूरी रात वह सोया नहीं था। अगर वह पत्थर पर भी सो जाता, तो उसे नींद आ जाती! गद्देदार बिस्तरे पर लेटते ही वह नाक बजाने लगा।

मन्त्री ने राजा, रानी से कहा—"अब सन्देह की गुंजाईश नहीं है। अब डर तो मुझे इस बात का है कि इतना बड़ा व्यक्ति हमारी लड़की से विवाह करने को तैयार होगा!"

"जो आदमी मामूली आदमी का वेष धारण कर यात्रा पर निकला है, हमारी लड़की से क्यों नहीं विवाह करेगा! पूछकर देखिये।"—रानी ने कहा।

इन्दुमति को साथ ले जाकर मन्त्री ने सुदर्शन से विवाह के बारे में कहा। पहिले तो सुदर्शन घबराया, पर बाद में मान गया। जल्दी ही, ग़रीब ब्रह्मचारी सुदर्शन का, राजकुमारी इन्दुमति से विवाह हुआ।

एक साल तक सुदर्शन ने समस्त विलासों में रमा रहा। बाद में उसके कष्ट शुरू हुए।

एक दिन इन्दुमति ने अपने पति से कहा—"क्यों जी! हम कब तक यहाँ यों बैठे रहेंगे! चलिए, हम अपने राज्य चलें!"

सुदर्शन ने चकित होकर पूछा—"हमारा राज्य....!"

"हाँ! आप महाराजा हैं, यह मुझे विवाह से पहिले ही पता लग गया था। कब तक चलेगा यह नाटक!"—इन्दुमति ने यह कहते हुये, मन्त्री की परीक्षा के बारे में भी बताया। यह सुनते सुनते सुदर्शन को ऐसा लगा, जैसे उसकी बुद्धि ही मारी गई हो! वह सन्न रह गया था।

परंतु पत्नी को कोई राज्य दिखाने के सिवाय उसके सामने कोई रास्ता न था। उससे सच कहा जा सकता था, पर सच कहने से उसने सोचा कि उसका मन दुखेगा! पत्नी को किसी प्रकार की तकलीफ़ देना उसको न भाता था।

"खैर! मैं पर्यटन प्रारम्भ करता हूँ। बाद में, उसे अपने आप ही सच मालूम

हो जायगा। जो होगा, सो होगा!"—सुदर्शन ने सोचा। ससुर से विदा लेकर, वह पत्नी के साथ निकल पड़ा।

हफ़्ताह बीते, महीने बीते। एक शहर से दूसरे शहर को, एक देश से दूसरे देश को पति-पत्नी चलते जाते थे। इन्दुमति इस ख्याल में थी कि पति उसको अपने देश ले जा रहा था। इसके सिवाय वह कुछ न जानती थी। वह उसके साथ पैदल चलती, पेड़ों की साया में विश्राम करती, सब तरह की मुसीबतें झेलती। पर उसने भूलकर भी एक बार अपने पति से न पूछा—"हम किधर जा रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं?"

कितनी ही बार पत्नी को धोखा देकर, सुदर्शन ने भाग जाने की सोची। परंतु वह पत्नी को, जो उसके साथ हर मुसीबत झेल रही थी, जो उसी के सहारे जी रही थी, वह छोड़कर न जा सका। उसको लगा कि उसकी पत्नी, पहिले की अपेक्षा कई गुना अधिक समीप थी।

छः महीने बाद पति-पत्नी कलिंग देश पहुँचे। व्यापारियों के पास इन्दुमति के कुछ कीमती गहने बेच कर, उन दोनों ने एक बुढ़िया के यहाँ ठिकाना किया।

उन दोनों को देखते ही बुढ़िया को सन्देह हुआ। इन्दुमति तो राजकुमारी की तरह दीख ही रही थी। परंतु बुढ़िया की नज़र सुदर्शन पर थी। क्योंकि पन्द्रह साल पहिले, कलिंग राजा के लड़के को चोर उठा ले गये थे। अगर वह लड़का जीवित रहता तो उसकी उम्र भी सुदर्शन की उम्र जितनी होती। बुढ़िया को शक हो रहा था कि कहीं वह लड़का सुदर्शन ही तो नहीं है!

उसने इन्दुमति को अलग बुलाकर पूछा—"आप कौन हैं? आपके पति क्या काम करते हैं? आप कहाँ के हैं?"

"मैं पुरंदर देश की राजकुमारी हूं। मेरा नाम इन्दुमति है। मेरे पति वेष बदले हुए एक राजकुमार हैं!"—इन्दुमति ने बुढ़िया से बता दिया।

"आपके पति किस देश के राजकुमार हैं?"—बुढ़िया ने उत्कण्ठा से पूछा।

"यह मैं नहीं जानती। मैंने अपने पति से पूछा भी नहीं है। हम बहुत दिनों से यात्रा कर रहे हैं।"—इन्दुमति ने कहा। बुढ़िया का सन्देह और भी पक्का हो गया। उसने दरबार में जाकर कलिंग राजा से कहा—"महाराज! मेरे घर में, एक लड़का अपनी पत्नी के साथ आया हुआ है। मुझे शक हो रहा है कि वह आपका ही लड़का है, जिसको चोर छुटपन में उठा ले गये थे!" उन दोनों को एक बार यहाँ बुला लाओ।"—राजा ने कहा।

उसी दिन शाम को बुढ़िया सुदर्शन और इन्दुमति को राज-महल में ले गयी। सुदर्शन को देखते ही कलिंग राजा और उसकी पत्नी बड़े खुश हुए। उन दोनों में उन्हें भी राजा के गुण दिखायी दिये। ये राज-घराने के लगे।

"बेटा! तुम हमारे लड़के ही हो। हमारे यहाँ ही रहो!"—कलिंग राजा ने कहा। सुदर्शन मान गया।

कुछ दिनों बाद सुदर्शन को कलिंग राज्य का युवराजा बनाया गया। पुरन्दर देश में यह समाचार पहुँचते ही, वहाँ के मन्त्री ने तुरंत कहा।

"मैंने तो पहिले ही कहा था न! हमारे दामाद का कलिंग देश का युवराजा होना हमारे लिये कितने सौभाग्य की बात है!"

मित्र-द्रोही

अलेग्ज़िन्ड्रिया शहर में अबूकीर नाम का एक रंगरेज़ रहा करता था। वह अपने काम में हुशियार और चतुर था, पर वह आलसी और धोखेबाज़ भी था। अगर कोई कपड़े रंगने के लिये देता, तो वह कपड़ों को बेच देता, और पैसा खाने-पीने में खर्च कर देता। वह बहुत दिनों तक ग्राहकों को ठगता रहता, और अन्त में कहता कि उसकी दुकान लुट गई थी और उनके कपड़े चोर ले गये थे।

धीमे धीमे लोगों को पता लग गया कि अबूकीर किस तरह का आदमी था। फिर भी कुछ अजनबी लोग उसको कपड़े दिया करते, और अबूकीर उनको धोखा देता। आखिर उसने रोज़ दुकान खोलना भी बन्द कर दिया। सामने वाली, नाई की दुकान में दिन भर बैठा रहता, और दुकान में आने-जानेवालों को देखता रहता। अगर वे पुराने ग्राहक होते, तो उनको दुकान पर देखने देता, और जाने देता। अगर कोई नया आदमी आता तो वह कपड़े लेता, और उन्हें बेच-बाचकर, खाने-पीने के लिये कुछ खरीद लेता।

पर यह कब तक जारी रहता! एक दिन अबूकीर ने देखा कि सरकारी कर्मचारीयों ने आकर उसकी दुकान के दरवाज़े बन्द कर दिये हैं। क्योंकि महाजनों ने अदालत से ज़ब्ती का हुक्म ले लिया था।

नाई भलामानस और सीधा-सादा आदमी था। उसका नाम आबूसीर था। "भाई! धोखेबाज़ी करके कब तक अपनी दुकान चलाओगे!"—अबूसीर ने अबूकीर से कहा। "जो कुछ तुम्हें अलाह देता है, उससे तसल्ली क्यों नहीं करते!"

कुमारी डी. सुषमा

"मैं क्या करूँ! दिन भर काम करता हूँ, पर खाने-पीने के लिये भी काफ़ी कमा नहीं पाता हूँ। तुम अपने पेशे में काफ़ी पैसे बना लेते हो। इसलिये तुम ईमानदार हो सकते हो।"—अबुकीर ने कहा।

"तुम्हारा ग़लत ख्याल है। मैं बहुत कम कमाता हूँ। अगर हम इस शहर को छोड़कर चले जायें, तो हो सकता है, हम अच्छी रोज़ी बना लें।"—अबूसीर ने कहा।

रंगरेज़ यह मान गया। उन दोनों ने शपथ ली कि जब कोई एक बेरोज़गार हो जायेगा, तो दूसरा उसकी मदद करेगा। और जो कुछ भी वे दोनों कमायेंगे, आपस में बाँट लेंगे।

अगले दिन वे नदी में, जहाज़ पर निकल पड़े। जो थोड़ा-बहुत खाना उनके पास था, वह कुछ दिनों बाद ख़तम हो गया। नाई यात्रियों की हजामत बनाता, और बदले में उनसे भोजन लेता। कई लोग उसे भोजन भी देते, और पैसे भी।

जहाज़ में अबूसीर ही एक नाई था। केप्टेन ने उसको बुलवा भेजा। हजामत करने पर, केप्टेन ने उसको पैसा देना चाहा। मगर अबूसीर ने पैसा लेने से इनकार कर दिया।

"ख़ैर, तुम और तुम्हारे दोस्त मेरे साथ खाना खाओ। जब खाने का समय हो तो मेरे कमरे में चले आना।"

अबूसीर ने केप्टेन को धन्यवाद दिया। और यात्रियों से खाने-पीने की चीज़े जमा करके अपने रंगरेज़ दोस्त के पास गया। वह जब से जहाज़ में आया था, तब से सो रहा था। वह सिर्फ़ खाने-पीने के लिये जगता। जब नाई ने उसे उठाया तो रंगरेज़ ने कहा—"बुरा न मानना, मेरे सिर में इतना चक्कर आ रहा है कि मैं खड़ा

भी नहीं हो सकता।" वह नाई का लाया हुआ भोजन, गबागब खाने लगा।

"यह भी कोई खाना है ! जहाज़ के केप्टेन ने हमें भोजन के लिये न्योता दिया है। अब खाने का समय हो गया है।"— नाई ने रंगरेज़ से कहा।

"मैं कैसे आ सकूँगा ! मैं खड़ा भी नहीं हो सकता।"—रंगरेज़ ने खाते खाते कहा। जब नाई केप्टेन के पास खाना खाने के लिये गया तो केप्टेन ने पूछा—"तुम्हारा दोस्त कहाँ है ?" "मेरे दोस्त के सिर में चक्कर आ रहा है।"—नाई ने उत्तर दिया। जब उन्होंने खा लिया, तो केप्टेन ने एक तश्तरी में बहुत सारे पकवान रखवा दिये, और उन्हें उसके दोस्त के पास अपने नौकर से भेज दिया।

रंगरेज़ जो खूब सो रहा था, उठा और केप्टेन के भेजे हुए सब पकवान खा गया, और फिर पहिले की तरह सो गया।

तीन सप्ताह बाद, जाते जाते जहाज़ एक शहर के बन्दरगाह में पहुँचा। दोनों दोस्त जहाज़ से उतरे और शहर में चले गये। उन्होंने एक सराय में, एक कमरा किराये पर लिया। रंगरेज़ कमरे में तुरंत सो गया।

वह रात-दिन सोता रहता, सिर्फ़ खाने-पीने के लिये उठता। फिर सो जाता।

परंतु नाई हर रोज़ बाहर जाता, काम करता, और खाने पीने की चीज़ ले आता। वह अपने लिये और अपने दोस्त के लिये खाना तैयार करता, रंगरेज़ को उठाता और उसको खाना खिलाता। उसने अपने दोस्त को कभी बुरा-भला न कहा। जब कभी नाई शहर के दर्शनीय स्थलों को देखने जाता तो उससे वह कहता—"मैं बाहर जा रहा हूँ। तुम आराम करो।" चालीस दिन गुज़र गये। नाई बीमार पड़ा। उसने सराय के चौकीदार को पैसे देकर बाहर से खाने की चीज़ें लाने के लिये कहा। अबूक़ीर तब भी सोता रहा।

पाँचवें दिन नाई का बुखार बढ़ गया। वह बेहोश-सा हो गया, और वह चौकीदार को खाना लाने के लिये बाहर न भेज सका। अबूक़ीर को भूख सताने लगी। वह उठा, और अबूसीर के कुरते की जेबों को टटोलने लगा। जेब में से पैसा लेकर सराय से वह शहर में घूमने चला गया।

यह बहुत सुन्दर शहर था, पर अबूक़ीर ने एक अजीब चीज़ देखी। उसने देखा कि लोग या तो सफ़ेद कपड़े पहिने हुये थे, नहीं तो नीले रंग के। कोई और रंग न दिखाई दिया। इसकी वजह जानने के लिए अबूक़ीर एक रंगरेज़ की दुकान पर गया, और अपना रूमाल रंगने के लिये देते हुए उसने पूछा—"क्या रंग लगाओगे? और इसका तुम क्या दाम लोगे?"

"मैं इसको नीला रंग दूँगा। इसके लिए तुम्हें बीस चान्दी की मुहरें देनी होंगी।"—दुकानदार ने कहा।

अबूक़ीर ने दुकानदार से बातों-बातों में बहुत-सी बातें मालूम कर लीं। नीला रंग

शहर में बहुत मिलता था और वह बहुत सस्ता भी था। उनको और कोई रंग मालूम ही न था। शहर में केवल चालीस रंगरेज़ थे, और वे आपस में इतने संगठित थे कि और कोई अपनी दुकान वहाँ नहीं खोल सकता था, न उनसे बराबरी कर सकता था।

यह जानकर अबूकीर वहाँ के राजा के पास गया, और उससे कहा कि वह सब रंगों में कपड़े रंग सकता है। उसने राजा से नई दुकान खोलने की इजाज़त माँगी।

राजा को यह जानकर ताज्जुब हुआ कि वह सब रंगों में कपड़े रंग सकता था। उसने अबूकीर को दुकान खोलने की सिर्फ़ इजाज़त ही नहीं दी, बल्कि उसको पाँच हज़ार सोने की मोहरों की पूँजी भी इस काम के लिए दी। मकान और काम करने के लिए कुछ गुलाम भी दिये।

जो कुछ रंगरेज़ की दुकान के लिए ज़रूरी था, अबूकीर ने खरीदा, और एक माहिर रंगरेज़ के रूप में दुकान चलाने लगा। शुरू शुरू में राजा ने उसको कई कपड़े रंगने के लिए भेजे। अबूकीर ने उन सब कपड़ों को तरह तरह के रंगों में रंगा, और दुकान के सामने उन्हें लटका दिया।

कपड़ों को देखने के लिये लोग जमा हो गये और उसकी दुकान का मुफ़्त में ही अच्छा विज्ञापन हो गया।

राजा अबूकीर के काम से बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसके भाग जगे। वह पैसा बनाने लगा। दरबार के सामन्त, राव-उमराव, उसके पास कपड़े रंगने के लिए भेजने लगे, और उसको इस काम के लिए खूब पैसा देते! थोड़े दिनों में अबूकीर रईस हो गया। लोग उसकी पूछ करने लगे।

इस बीच में, अबूसीर, सराय में तीन दिन तक बेहोश पड़ा रहा। चौकीदार

को शक हुआ कि उसने उसे क्यों नहीं बुलाया था। चौथे दिन वह उसके पास गया। अबूसीर ने, जो अब होश में आ गया था, कुरते की जेब में से पैसे लेकर, कुछ खाने-पीने के लिये लाने को कहा।

पर कुरते की जेब में कुछ न था। चौकीदार अबूकीर के बारे में भी न जानता था। अबूसीर की आँखों से आँसू बहने लगे। चौकीदार ने उसको समझाया। उसको दलिया बनाकर भी दिया। वह अपने पैसे से ही उसकी सेवा-शुश्रूषा करने लगा। एक दिन अबूसीर के सारे शरीर पर खूब पसीना आया, और उसकी बीमारी दूर हो गई। वह अच्छा हो गया।

नाई गली में अभी थोड़ी दूर ही गया था कि उसको एक बड़ी रंगरेज़ की दुकान दिखाई दी। रंग-बिरंगे कपड़े लटके हुये थे, और वहाँ जमा हुए लोग रंगरेज़ की प्रशंसा कर रहे थे। नाई वहाँ खड़ा हो गया।

जब उसको मालूम हुआ कि वह दुकान उसके दोस्त अबूकीर की थी, तो उसे बहुत प्रसन्नता हुई। वह सोचने लगा कि शायद काम की अधिकता के कारण वह उसे देखने न आ सका होगा।

अबूकीर ने अन्दर देखा तो उसका साथी, मज़े में बैठा हुआ था, कितनी ही चीज़ें आस-पास रखी हुयी थीं। नाई को देखकर अबूकीर उससे गले लगाने के लिए नहीं उठा। इतना ही नहीं, वह गुस्से में चिल्लाया—"अरे तू फिर यहाँ आ मरा है। मुझे कितनी बार कहना होगा कि तू कम्बख्त यहाँ न आया कर।"

उसका यह कहना था कि अन्दर से गुलाम आये और उस अभागे नाई को पकड़कर ले गये। अबूकीर ने उसे इस तरह पीटा, जैसे वह कोई कुत्ता हो। "यहाँ

फिर कभी अपना मनहूस मुँह न दिखाना। वरना मैं तेरी शिकायत राजा से कर, तेरा सिर धड़ से अलग करवा दूँगा।"

अबूसीर को कुछ न सूझा। उसने सोचा—"शायद अल्लाह उसकी परीक्षा ले रहे हैं। उसकी बस एक ही मर्ज़ी थी—वह यह कि कहीं जाकर अच्छी तरह नहा ले। वह शहर भर में घूमता रहा, पर उसे एक भी स्नानागार कहीं न दिखाई दिया। अबूसीर ने एक आते-जाते व्यक्ति से पूछा—"क्या तुम बता सकते हो कि पास में कोई स्नानागार है कि नहीं?"

"स्नानागार!—स्नानागार क्या बला है?"—उसने अचरज करते हुए पूछा। "इसका मतलब है, वह जगह, जहाँ लोग आकर नहा-धो सकते हैं।"—नाई ने कहा।

"राजा हो, चाहे कोई और, अगर वह नहाना चाहता है तो उसको समुद्र में नहाना पड़ेगा।"—उस व्यक्ति ने कहा।

अबूसीर को यह जानते हुए देर न लगी कि इस शहर में लोगों को यह न मालूम था कि अच्छी तरह स्नान करना किस चिड़िया का नाम है। उसने राजा के पास जाकर कहा—"यह इतना सुन्दर शहर

है, पर अफ़सोस की बात है कि यहाँ एक भी स्नानागार नहीं है।"

जब उसने राजा को बताया कि स्नानागार क्या होता है और कैसे चलाया जाता है तो राजा ने कहा—"तुम जितना पैसा चाहो, मैं दूँगा ! तुम अपनी एक जगह चुन लो, और वहाँ एक अच्छा स्नानागार बनाओ। अपने आप उसे चलाओ और मैं देखूँगा कि सचमुच यह उतना अच्छा होगा कि नहीं, जितना तुम बताते हो।"

राजा की मदद से, अबूसीर ने शहर के बीचों-बीच एक अच्छा स्नानागार बनाया। उसने पानी को जमा करने, और गरम करने के लिये अच्छा इन्तज़ाम किया। स्नानागार के मध्य में उसने एक सुन्दर फ़व्वारा बनवाया। राजा ने उसको कई गुलाम दिये, और नाई ने उनको मालिश करना, और नहलाना सिखलाया, ताकि वे नहानेवालों की मदद कर सकें।

स्नानागार के उद्घाटन के दिन राजा, सामन्त और बड़े बड़े राज्य के कर्मचारी स्नान करने आये। अबूसीर ने नहाने के पानी में गुलाब-जल भी मिला दिया था, जिससे पानी महक रहा था। स्नान करने वालों की अच्छी तरह मालिश की गई और उनको भलीभाँति नहलाया गया। उन्हें मालूम ही न था कि स्नान इतनी अच्छी तरह भी हो सकता है।

राजा ने एक बार स्नान करने के लिये अबूसीर को हज़ार सोने की मुहरें दीं। बाकी सब सामन्तों ने सौ सौ मुहरें। पहिले पहिले दिन ही अबूसीर को बहुत-सा पैसा उससे मिल गया था।

अगले दिन से स्नानागार आम जनता के लिये खोल दिया गया। स्नानागार में स्नान करने के लिए लोगों का हमेशा

जमघट लगा रहता। जो वे देते, अबूसीर लेता। क्योंकि वह चाहता था कि ग़रीब से ग़रीब आदमी स्नानागार का लाभ उठाये।

एक बार जहाज़ का केप्टेन स्नान करने स्नानागार में आया। उसने अबूसीर को पहिचान लिया और नहाने के बाद वह उसको पैसे देने गया। परन्तु अबूसीर ने केप्टेन से एक पाई लेना भी स्वीकार न किया। वह पहिले से ही उसका कृतज्ञ था। केप्टेन, नाई के बर्ताव से इतना प्रसन्न और प्रभावित हुआ कि मौका मिलने पर, उसने उसका उपकार करने की ठानी।

स्नानागार के बारे में सुनकर अबूकीर भी एक दिन नहाने के लिए अपने अनेक गुलामों के साथ स्नानागार में आया। अबूसीर खुद उससे मिलने के लिए आया। उसे उसने गले लगाया।

अबूकीर ने कहा—"अरे भाई, हमने तो क़सम खाई थी कि हम एक दूसरे की मदद करेंगे। पर यह क्या, तुम एक बार मुझे देखने भी न आये!"

"आया तो था, परंतु तुमने डंडे से मेरी आवभगत की, मुझे चोर कहा और भगाया था।"—अबूसीर ने कहा।

"क्या तुम ही थे, जिसे मैंने पीटा था! क्या शर्म की बात है! एक बदमाश, जिसकी शक्ल-सूरत ठीक तुम्हारी जैसी थी, रोज़ दुकान पर आता और कपड़े या कुछ और चुरा ले जाता। आख़िर वह ग़रीब था, इसलिये कई बार मैंने उसे कुछ न कहा। परंतु आखिर मुझे उस पर इतना गुस्सा आया कि मैंने उसकी खूब मरम्मत कर दी। मैंने कभी कल्पना भी न की थी कि वह तुम ही थे"—अबूकीर ने कहा।

"मैं तो सिर्फ़ एक ही बार तुम्हारी दुकान पर आया था, तुमने उसी बार मुझे

अच्छी तरह पिटवा दिया।"—अबूसीर ने झिझकते हुये कहा।

"बाप रे बाप! तब तुमने कहा क्यों नहीं कि तुम थे!"—अबूकीर ने पूछा।

"शायद हमारी किस्मत में यही लिखा था। हमें अब इसकी फ़िक्र नहीं करनी चाहिये।"—अबूसीर ने जवाब दिया। उसने अपने दोस्त को बताया कि कैसे उसने स्नानागार चलाना शुरु कर दिया था। तब उसको अच्छी तरह नहलाया-धुलाया।

"स्नान तो बहुत अच्छा है, पर इसमें एक कमी है।"—अबूकीर ने कहा!

"क्या कमी है!"—अबूसीर ने पूछा।

"तुमने नहानेवालों के लिये चूने और संखिया का बना उपटन देने का इन्तज़ाम क्यों नहीं किया, ताकि वह अनावश्यक बाल हटा सके।"—अबूकीर ने पूछा।

"अरे दोस्त! मैं तो इसके बारे में कतई भूल गया था। मैं कल ही इसका इन्तज़ाम कर दूँगा। सुझाव के लिये शुक्रिया"—अबूसीर ने कहा।

स्नानागार से सीधा अबूकीर राजा के पास गया और उसने कहा—"महाराज! ख़तरे के बारे में आगाह कर देना मेरा कर्तव्य है। आपने एक अच्छा स्नानागार बनवाया है, और उसकी तारीफ़ करनी ही चाहिये। पर जिस आदमी को आपने इसको चलाने का काम सौंपा है, वह आपको नुक़सान पहुँचाना चाहता है। इसमें शक नहीं कि आपको ज़हर देने के लिए ही उसने यह स्नानागार की चाल चली है। आप स्वयं यह जान जायेंगे, जब आपको उसका किस्सा मालूम होगा।"

"मुझे और इस शख़्स को एक बार एक सुल्तान के क़ैदी होने की नौबत आई। मैंने कपड़े रंगने के काम में कुशलता

दिखाकर सुल्तान से अपनी रिहाई हासिल कर ली। परंतु यह नाई, न अपने को, न अपनी पत्नी या बाल-बच्चों को ही किसी तरह छुड़ा सका। आखिर सुल्तान ने उसको इस शर्त पर छोड़ दिया कि वह आपके राज्य में जाये, और स्नानागार खोले और ज़हरीले उपटन से आपका खातमा कर दे। जब यह काम पूरा हो जायेगा, तब उसकी पत्नी और बाल-बच्चे छोड़ दिये जायेंगे और सुल्तान आपके राज्य पर हमला कर देगा।"

"ज़हरीला उपटन! अबूसीर ने कभी भी उसे मेरे शरीर पर नहीं लगाया।" राजा ने कहा।

"यही वजह है कि आप अभी सही सलामत और तन्दुरुस्त हैं। कभी न कभी वह आप पर भी वह उपटन लगायेगा, जिसमें संखिया मिला हुआ है। वह कहेगा कि उससे फ़ालतू बाल साफ़ हो जाते हैं। मैंने आपको सावधान कर दिया है। क्यों कि मैं नहीं चाहता कि आपकी किसी प्रकार की भी हानि हो। अच्छा है, आप उससे आइन्दा सावधान रहें।"

राजा के कान भरकर अबूकीर चला गया। राजा अबूसीर के प्रति बहुत ही क्रुद्ध था। वह अपने गुलामों के साथ अगले

दिन स्नानागार गया। अबूकीर ने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। उसने खुद राजा की मालिश की, वह उपटन भी लगाने के लिये लाया।

"यह क्या चीज़ है?"—राजा ने पूछा।

"यह बाल साफ करनेवाला उपटन है।"—अबूसीर ने जवाब दिया।

राजा ने उपटन सूंघा, और उसमें उसको संखिया की बू आई। उसने गुस्से में अपने गुलामों को आज्ञा दी—"पकड़ लो, इस विश्वासघाती को, और उसको दरबार में हाज़िर करो।" राजा बिना नहाये ही चला गया।

जब अबूसीर दरबार में ले जाया गया तो राजा जहाज़ के कप्तेन से कह रहा था—"इस बदमाश को अपने साथ ले जाओ। उसको चूने के बोरे में रखकर समुद्र में डाल दो, ताकि बेमौत, घुल घुलकर वह मरे।"

केप्टेन और कुछ न कह सका, सिवाय इसके कि "हाँ महाराज!" पर जब वह अबूसीर को घर ले जा रहा था तो उसने उससे पूछा—"तुमने क्या कर डाला कि राजा तुमसे इतने खीझ खाये हुये हैं। मैं तो समझता था कि तुम बहुत भले आदमी हो।"

"अल्लाह की क़सम! मैंने कुछ नहीं किया। पर राजा फ़ाल्तू मुझे सज़ा न देंगे, वे तो मुझ पर बड़े मेहरबान थे।"—अबूसीर ने बड़े विनीत भाव से कहा।

"कुछ भी हो! मैं तुम्हें वैसी मौत मरने नहीं दूँगा। एक जाल ले लो, और समुद्र के एक द्वीप में चले जाओ। अन्धेरा होने तक तुम वहाँ मछलियाँ पकड़ते रहो। अन्धेरा होने के बाद राजा का रसोइया मछली के लिए आयेगा। इस बीच में, एक लकड़ बोरे में रखकर, मैं समुद्र में छोड़ दूँगा। सचाई बाद में मालूम हो जायेगी।"—जहाज के केप्टेन ने अबूसीर से कहा।

नाई मछली पकड़ने के लिए समुद्र के द्वीप में चला गया, और केप्टेन ने एक बोरे में, दो मन चूना, और लकड़ बाँध दिया, और बोरे को एक छोटी नाव में रखकर महल की तरफ़ गया। खिड़की में राजा बैठा हुआ था। उसने हाथ से इशारा किया कि बोरे को पानी में फेंक दिया जाय। जब उसने इशारा किया, तब कोई चीज़ हवा में उड़ी, और पानी में टप की आवाज़ से गिरी।

केप्टेन ने बोरे को पानी में फेंक दिया। गरम गरम बुलबुले, और भाप निकलने लगी। इधर, शाम तक अबूसीर ने काफ़ी मछलियाँ पकड़ ली थीं। सवेरे से उसने कुछ खाया न था, इसलिये वह बहुत भूखा था। जाने से पहिले वह एक मछली पकाकर खाना चाहता था। उसने एक बड़ी मछली पकड़ी और अपने चाकू से उसके दो टुकड़े किये। उसने मछली के अन्दर एक अँगूठी देखी। उसने तुरंत उसको बाहर निकला। वह राजा की अँगूठी थी।

"अल्लाह ही सब जानते हैं।"—अबूसीर ने सोचा। उसके लिये यह जानना असम्भव था कि कैसे उसके जाल में ऐसी
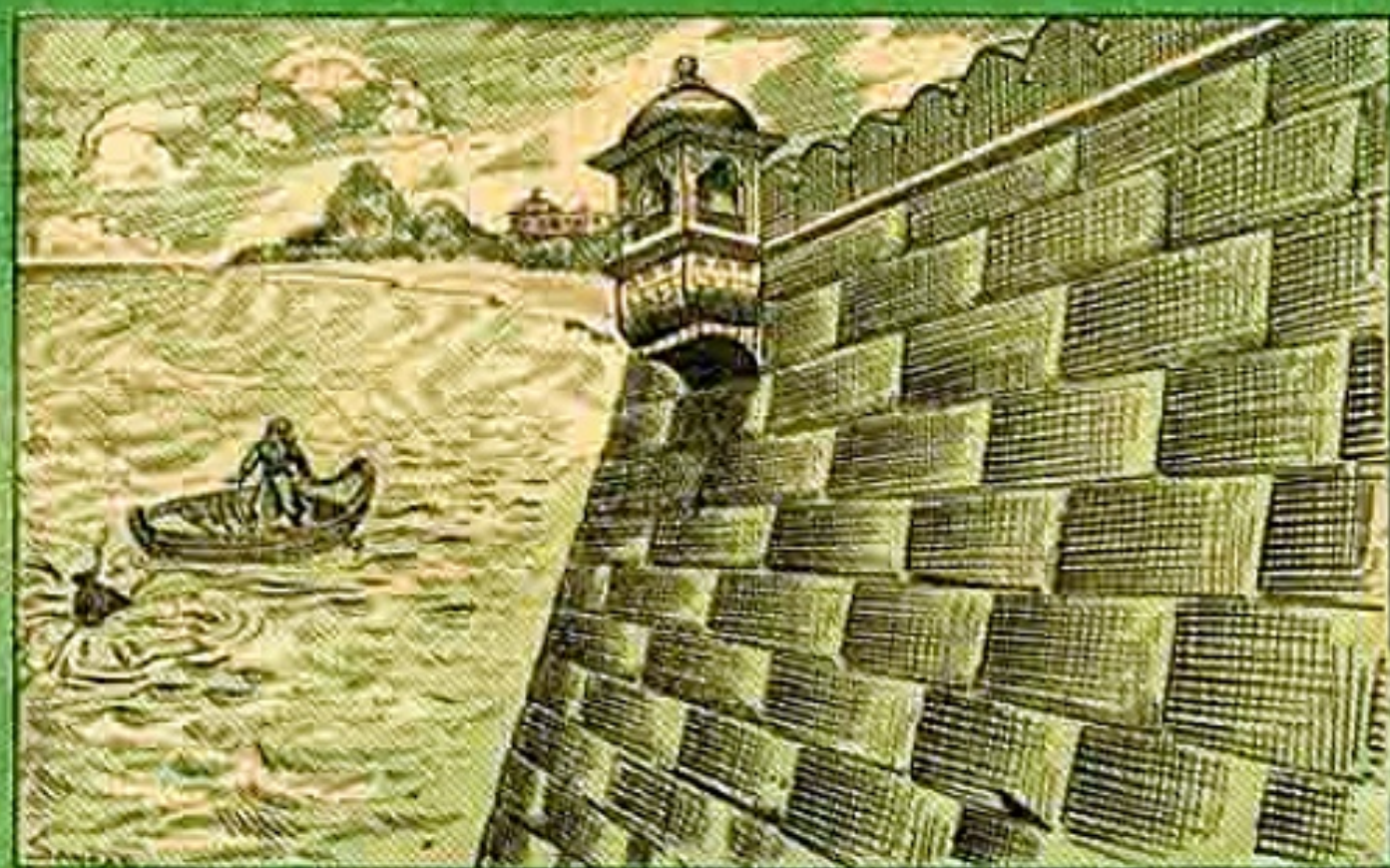
मछली फँसी, जिसने राजा की अँगूठी निगल ली थी। फिर उस मछली को ही क्यों उसने खाने के लिये चुना था!

वह केप्टेन के घर गया। उसको उसने अँगूठी दिखाकर कहा—"यह तुरंत राजा को लौटा दी जानी चाहिये। इसके बग़ैर उनको बड़ी दिक्कत होगी। मैं इसको उन्हें वापिस लौटाने जा रहा हूँ।"

केप्टेन घबराया। अगर राजा अबूसीर को देखता तो उसे मालूम हो जाता कि केप्टेन ने उसके हुक्म का पालन न न करके उसको धोखा दिया था।

"घबराओ मत। अल्लाह सब देखते हैं। कम से कम मैं तो जान पाऊँगा कि मेरा क्या क़सूर है।"

राजा अबूसीर को देखकर बड़ा चकित हुआ। "तुम बोरे से कैसे निकल आये!"—उसने पूछा।

अबूसीर ने जो गुज़रा था, सो राजा को कह सुनाया और उसको उसकी शाही अँगूठी सौंप दी। राजा नाई की कर्तव्य-निष्ठा को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। "तुम तो बड़े अच्छे, वफ़ादार, भलमानस लगते हो। तब तुमने हमारी जान लेने की क्यों कोशिश की थी!"—राजा ने पूछा।

"मैंने कभी ऐसी कोशिश नहीं की महाराज! किसीने आपसे मेरी चुगली की है।—" अबूसीर ने कहा।

"मुझे रंगरेज़ अबूक़ीर ने ही बताया था। मालूम होता है कि तुम्हारी पत्नी और बाल-बच्चे किसी सुल्तान की क़ैद में हैं, और तुमने उन्हें छुड़ाने के लिए मुझे मारने का वचन दिया है। तुमने उस उपटन में संखिया मिलाया था न!"

अबूसीर दो क्षण के लिए सन्न खड़ा रहा। उसके मुख से कोई बात न

निकली। तब उसने कहा—"जो कुछ मैं अबूकीर के लिये कर सकता था, मैंने किया। मैंने कभी उसका नुक़सान न सोचा, न किया। तो भी उसने मेरा पैसा चुराया, बिना किसी बात के मुझे पिटवाया; बिना किसी वजह के मुझे मौत की सज़ा दिलवाई। वह स्नानागार में एक मित्र की तरह आया। उसने वहाँ के प्रबन्ध की प्रशंसा की, और उसी ने सुझाव दिया था कि अगर कोई कमी है तो बाल साफ़ करनेवाले उपटन की ही है। फिर उसी ने आपके पास दौड़े दौड़े मेरी शिक़ायत की कि मैं आपको मारना चाहता था। इस तरह के धोखेबाज़ दोस्त के बारे में कोई क्या सोच सकता है! आप ही सोचियेगा।"

"तो तुम कहते हो कि उपटन ज़हरीला नहीं है!"—राजा ने पूछा।

"नहीं महाराज! यह कतई बेख़तर है। हमारे देश में हर कोई इसका इस्तेमाल करता है। जब तक उस आदमी ने न बताया था, न जाने मैं क्यों इसे भूल गया था!"—अबूसीर ने जवाब दिया।

जो कुछ गुज़रा था, अबूसीर ने राजा के सामने कह सुनाया। राजा ने सराय के चौकीदार और रंगरेज़ के गुलामों को बुला भेजा। चौकीदार ने अबूसीर को पहिचान लिया, और उसने राजा को यह भी बताया कि किस तरह उसका दोस्त, जब वह बेहोश पड़ा था, उसका सारा पैसा चुराकर ले गया था। अबूक़ीर के गुलामों ने भी क़बूल कर लिया कि उन्होंने अपने मालिक के हुक्म पर ही अबूसीर को बहुत मारा-पीटा था।

राजा ने अबूक़ीर को तुरंत गिरफ़्तार करने का हुक्म दिया। उसको, हाथ-पैर बाँधकर दरबार में लाया गया। उसको

देखते ही चौकीदार ने कहा—"यह वही व्यक्ति था, जो दिन-रात सोता रहता था, और सिर्फ़ खाने-पीने के लिए उठा करता था। इसी ने उसका पैसा चुराया था, जब वह बुखार से बेहोश पड़ा था।"

जो जो अबूसीर ने कहा था, वह ठीक निकला और अबूक़ीर का अपराध और भी पक्का साबित हुआ।

"इसे चूने के बोरे में डालकर समुद्र में फेंक दो। यही उसकी सज़ा है।"—राजा ने नौकरों को हुक्म दिया।

अबूसीर ने राजा से अपने पुराने दोस्त को माफ़ करने की बिनती की। "जो कुछ बुरा उसने तुम्हारा किया, तुम उसको माफ़ कर सकते हो, पर उसने मेरा जो नुक़सान किया है, वह मैं कभी भी माफ़ नहीं कर सकता।"

राजा के हुक्म के अनुसार अबूक़ीर को चूने के बोरे में डालकर समुद्र में फेंक दिया गया। वह बुरी मौत मरा।

जब राजा ने अबूसीर को बुलाकर पूछा—"मैं अब तुम्हारे लिये क्या कर सकता हूँ?" तब उसने उत्तर दिया—"मुझे अपने देश वापिस जाने दीजिये। मैं अब यहाँ अपने को सुखी अनुभव नहीं करता।" राजा ने उसको कई तरह के क़ीमती उपहार दिये, और उसके जाने के लिए एक जहाज़ का भी प्रबन्ध कर दिया। जब वह जा रहा था तो उसे एक बोरा तैरता हुआ दिखाई दिया। उसने उसको जहाज़ के ऊपर खिंचवाया। उसमें उसके दोस्त अबूक़ीर का शव था। उसने शव को अलेग्ज़ेन्ड्रिया ले जाकर दफ़ना दिया और वहाँ उसके लिए एक मक़बरा भी बनवाया।

भेड़ोंवाला भीम

एक गाँव में बनवारी नाम का गड़रिया रहा करता था। एक दिन जब वह चरागाह में अपनी भेड़-बकरियों को चरा रहा था तो उसे एक पेड़ के नीचे, चीथड़ों में लिपटा हुआ दो दिन का बच्चा मिला। बनवारी के अपने कोई बाल-बच्चे न थे, इसलिये बच्चे को पा वह बड़ा प्रसन्न हुआ। शाम तक उस बच्चे को वह एक भेड़ का दूध पिलाता रहा, फिर उसे घर ले गया।

तब से वह भेड़ ही मानों उसकी माँ हो गई। उसका दूध पीकर वह छोटा बच्चा खूब हृष्टपुष्ट हो गया। उसके बढ़ते बल को देखकर, गड़रिये ने उसका नाम भीम रखा। या तो उसकी नसल ही ऐसी थी, या भेड़ के दूध की महिमा थी कि थोड़े दिनों में वह बहुत ताकतवर हो गया। वह आसानी से पेड़ों को उखाड़कर फेंक दिया करता था। पत्थरों को चूर चूर कर दिया करता था।

जब भीम चौदह वर्ष का हुआ तो उसके पिता ने कहा—"बेटा! तुम्हारा नाम अब ही इतना मशहूर है, भला तुम गड़रिया बनकर क्या करोगे! देश-विदेश घूमकर, बड़े होओ और धनी होओ। जाओ अपना भाग्य और कौशल दिखाओ।"

भीम घर से निकला। उसने कई शहर देखे। कई बड़े बड़े पहलवानों को उसने हराया।

श्री केवल कृष्ण कपूर

कुछ समय गुज़रा। जब भीम, एक नगर के पासवाले जङ्गल में से गुज़र रहा था, तो उसे एक आदमी दिखाई दिया। वह आदमी बड़े बड़े पेड़ों को तोड़कर उनके टुकड़े टुकड़े कर रहा था। भीम ने उसके पास जाकर पूछा—"क्यों भाई! क्या बात है? क्यों इस तरह पेड़ों को तोड़-फाड़ कर तितर-बितर कर रहे हो?"

"सुना है, भेड़ोंवाला भीम आ रहा है! उसको हराने के लिये ही मैं इस तरह कसरत कर रहा हूँ।"—उसने सीना तानकर जवाब दिया। "मैं ही भेड़ोंवाला भीम हूँ। चाहते हो तो आओ मुझे जीतो।"-भीम ने कहा।

दोनों में मुक्कामुक्की शुरू हुई। दोनों खूब ताकतवर थे। भीम ने पेड़ फाड़नेवाले पहल्वान की कमर पकड़कर उसे नीचे दे मारने की कोशिश की। पर वह पैंतरा बचाकर दूर चला गया, और भीम की छाती पर कूदा। दोनों पैरों से उसने उसे मारना चाहा, परंतु भीम ने उसके दोनों पैरों को रस्सी की तरह लपेटते हुए दूर फेंक दिया। उनके भयंकर युद्ध के कारण भूमि भी कांपने लगी।

आख़िर, भीम ने उस व्यक्ति को दोनों हाथ पकड़कर ऊपर उछाला, जैसे वह कोई

गेंद हो। जब वह ज़मीन पर गिरा, तो ज़मीन में वह घुटनों तक गड़ गया। परंतु जैसे तैसे वह बाहर निकल आया, और भीम को उठाकर उसने भूमि पर मारा। उसकी चोट के कारण भीम जाँघों तक ज़मीन में गड़ गया। उसे गुस्सा आ गया। वह बाहर निकला। उसने उस व्यक्ति को उठाकर इस तरह पटका, जैसे किसी कील को ज़मीन में गाड़ रहा हो। उसको उसने गले तक दाब दिया था।

"बस करो भाई! तुम ही जीते। मुझे ऊपर खींचो। मैं अब से तुम्हारा शिष्य हूँ। तुम्हारे साथ ही रहूँगा।"—उस व्यक्ति ने हाथ जोड़कर कहा। भीम ने उसे ऊपर निकाला और अपने साथ लेकर चल दिया।

दोनों घूमते घूमते एक पहाड़ी इलाके में गये। वहाँ उन्हें एक विचित्र मनुष्य दिखाई दिया। वह आदमी बड़े बड़े पत्थरों को हाथ में लेकर पीस रहा था।

"क्यों भाई! पत्थरों को यों पीस रहे हो?"—भीम ने पूछा।

"सुना है, भेड़ोंवाला भीम आ रहा है। मैं उसको हराने के लिये इस तरह कसरत कर रहा हूँ।"—उस व्यक्ति ने बड़े गर्व से जवाब दिया।

"मैं ही मेड़ोवाला भीम हूँ। चाहते हो तो आओ, हराओ।"

दोनों भिड़ गये। इस व्यक्ति की भी वही गति हुई, जो पेड़ चीरनेवाले की हुई थी। वह भी भीम का शिष्य हो गया और उसके साथ निकल पड़ा।

तीनों चलते चलते एक शहर में पहुँचे। वहाँ उन्हें एक अजीब आदमी दिखाई दिया। वह बड़े बड़े लोहे के गोलों को लेता, और ऐसे उन्हें गूँधता जैसे कोई आटा हो।

"क्यों भाई, इस तरह लोहे को क्यों गूँध रहे हो?"—भीम ने उससे पूछा।

"सुना है, मेड़ोवाला भीम आ रहा है। उसको हराने के लिये मैं कसरत कर रहा हूँ।"—उसने कहा।

"मैं ही मेड़ोवाला भीम हूँ। चाहते हो तो आओ, मुझे हराओ।"—भीम ने कहा।

दोनों लड़ने लगे। इसकी भी वही गति हुई, जो पहिले दो व्यक्तियों की हुई थी। वह भी औरों की तरह भीम का शिष्य हो कर उसके साथ चल पड़ा।

चारों चलते चलते एक घने जङ्गल में पहुँचे। पहिले दिन, पेड़ों को चीरनेवाले पहिल्वान को रसोई का काम सौंप, औरों को साथ लेकर, भीम जङ्गल में शिकार खेलने चला गया।

जब वह रसोई बना रहा था तो एक बौने ने आकर उससे कहा—"भाई! भूख लग रही है। कुछ खाने को दोगे?"

"जा बे हट! भाग यहाँ से, खाना-वाना कुछ नहीं मिलेगा।" बौना थोड़ी दूर जाकर बैठ गया। जब खाना बन गया, वह पीछे से आकर उस व्यक्ति की छाती पर चढ़ बैठा, और उसे नीचे गिराकर, खूब पीटा, और खा-पीकर आराम से चलता बना। पहल्वान देखता रह गया।

बौने की करामात देखकर पेड़ चीरनेवाला पहल्वान बहुत शर्मिन्दा हुआ। वह शिकार पर गये हुए लोगों को यह बात न बताना चाहता था। इसलिये वह फिर खाना बनाने लगा। परंतु खाना बनने से पहिले ही वे लोग शिकार खेलकर आ गये। जब बहुत देर तक खाना न बना तो मेड़ोंवाले भीम ने ऊबकर कहा—"तुम्हें खाना बनाना भी नहीं आता है?"

अगले दिन उसने पत्थर पीसनेवाले को खाना बनाने का काम सौंपा, और औरों को साथ लेकर शिकार खेलने चला गया। उस दिन भी वह बौना आया। उसकी भी वही हालत हुई, जो पेड़ चीरनेवाले की हुई थी। जब भीम वगैरह वापिस आये तो वह भी दूसरी बार खाना पका रहा था। उसने भी अपने साथियों से कुछ न कहा। वह भी शर्म के मारे मरा जाता था।

तीसरे दिन लोहे के गोलों को गूँथनेवाले को रसोई का काम सौंप, भीम औरों के साथ जङ्गल में शिकार खेलने चला गया। फिर बौना आया। उसने उस पहलवान को नीचे पछाड़ा, और सब खा-पीकर वह चला गया। पहलवान बिचारा कुछ भी न कर पाया। वह देखता रह गया। भीम जब वापिस आया, तो खाना न बना था। उसे आश्चर्य हुआ। वह ताड़ गया कि जरूर कोई न कोई बात है, और शिष्य बताने में शर्मा रहे हैं। चौथे दिन उसने खाना बनाने का काम अपने ऊपर लिया, और शिष्यों को जङ्गल में शिकार खेलने के लिये भेज दिया।
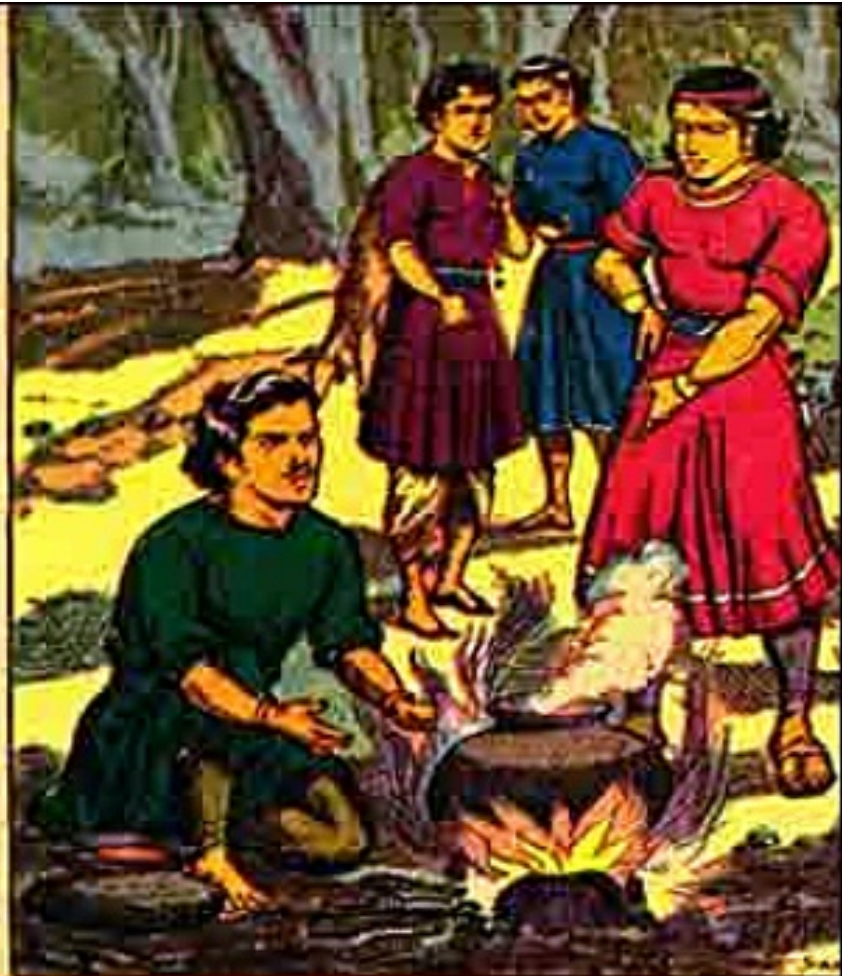
खाना तैयार होने को था कि बौना फिर आया। उसने भोजन माँगा। भीम ने बर्तन उठाकर कहा—"चल बे हट।" बौना न हटा और भीम का गला पकड़कर

लटकने लगा। भीम ने उसको पकड़कर दूरी पर, एक पेड़ के साथ बाँध दिया।

शिष्य यह सोच रहे थे कि इस बार गुरु जी का अपमान होगा। पर वहाँ खाना तैयार देखकर उनको आश्चर्य हुआ।

"तुम उस बौने को भी न जीत सके! है किस काम की तुम्हारी अक्ल! खाना खाओ। फिर दिखाऊँगा, मैंने उसकी क्या गत बनायी है।"—भीम ने कहा।

भोजन के बाद चारों उस पेड़ के पास गये, परन्तु वहाँ पेड़ न था। जहाँ पेड़ होना चाहिये था, वहाँ एक बहुत बड़ा गढ़ा था। पेड़ को घसीटकर बौना ले गया था। इसके निशान ज़मीन पर दिखाई दे रहे थे। चारों उन निशानों को देखते देखते आगे आगे चले। उनको बड़ा अचरज हो रहा था।

ये निशान यकायक एक बड़े गढ़े में खतम हो गये। जब गढ़े के अन्दर भेड़ोंवाले भीम ने झुककर देखा तो कहीं उसका तह ही न दिखाई देता था।

"मैं इस टोकरी में बैठता हूँ। मुझे रस्सी के सहारे नीचे उतारो। जब मैं उस बौने की मरम्मत कर दूँ, तब मुझे ऊपर खींच लेना।"—भीम ने कहा।

बहुत नीचे जाकर, टोकरी ज़मीन पर जा लगी। वहाँ सुन्दर बाग़-बगीचे, मकान वगैरह थे। बगीचे में घूमते-घूमते भीम ने एक सुन्दर कन्या को देखा। वह भीम को देखते ही घबरा उठी—"तू यहाँ क्यों आया है? यह नाग-लोक है। अगर बारह फ़नवाले नागेन्द्र ने तुझे देख लिया तो जिन्दा न छोड़ेगा। यहाँ से भाग जा।"—उस कन्या ने कहा।

"नागेन्द्र को मुझे देखकर डरना चाहिये। मैं भला क्यों नागेन्द्र से डरूँ! ख़ैर, तू कौन है?"—भीम ने पूछा।

"मैं एक राजकुमारी हूँ। मुझे और मेरी तीन बहिनों को नागेन्द्र ने यहाँ पकड़ कर रख रखा है। अगले नाग-पंचमी के दिन, केंचुली छोड़ हम से वह विवाह करेगा।"—उस कन्या ने कहा।

वे बातें कर ही रहे थे कि बारह फ़णोंवाला नागेन्द्र उस तरफ़ आ पहुँचा। भीम को देखते ही उसने फुंकारते हुए कहा—"घमण्डी! तेरी इतनी हिम्मत कि मेरी जगह भी आ गया है? यहाँ मेरा स्थान-बल है। अब देखें, कैसे बच निकलेगा!"—कहता कहता वह भीम पर

कूदा। नागेन्द्र भीम को अपने शरीर से लपेटने की कोशिश करने लगा।

कहीं ऐसा न हो कि नागेन्द्र उसको चूर चूर कर दे, भीम ने अपना शरीर लोहे का-सा बना लिया। यह देख, अपने बारह फणों से फुँकारते हुए, नागेन्द्र ने भीम की ओर देखा। भीम ने अपने दोनों हाथ से फण को ज़ोर से पकड़ लिया। नागेन्द्र ने अपने को छुड़ाने के लिये, अपने शरीर को उसके बाहु पर लपेटना शुरू किया। पर कोई फ़ायदा न हुआ। भीम ने अपनी पकड़ ढीली न की। नागेन्द्र के फ़ण को उसने ज़ोर से ज़मीन पर मारा। उस चोट से नागेन्द्र के होश-हवाश उड़ गये। उसकी पकड़ ढीली पड़ गई। नागेन्द्र का शरीर भी ऊपर से धीमे धीमे फिसलने लगा। भीम इस बार भी जीता।

आख़िर नागेन्द्र भी मरता-जीता, ज़मीन पर गिरा और हाँफ-हाँफकर कहने लगा—"मुझे भी अपना शिष्य बना लो।"

"अगर तू बलवान है तो अपनी दुनियाँ में ही रह। अगर तू हमारी दुनियाँ में आया तो, ख़बरदार! चीर-फाड़कर फेंक दूँगा। समझे!"—भीम ने उसको आगाह किया और शान से खड़ा रहा।

बाद में, चारों राजकुमारियों को अपने साथ टोकरी में बिठाकर उसने रस्सी हिलायी। भीम के शिष्यों ने टोकरा ऊपर खींच लिया।

भीम और उसके साथियों ने उन चारों राजकुमारियों के साथ विवाह कर लिया, और वे अपने ससुर के घर ही रहने लगे। फिर कभी बारह फणवाला नागेन्द्र इस भूमि पर न दिखाई दिया। शायद उसे भय है कि अब भी भेड़ोंवाला भीम इस संसार में है।

कुरिपुर के राजा का नाम बलवर्धन था। उसकी पत्नी एक कन्या को जन्म देकर मर गई थी। राजा ने दुबारा विवाह किया, पर दूसरी पत्नी से उसके कोई सन्तान न हुई। राजा ने लड़की का नाम हेमा रखा, और उसका बड़े लाड़-प्यार से लालन-पालन करने लगा। क्योंकि हेमा को ही उसके बाद गद्दी पर बैठना था, राजा ने उसको समस्त विद्यायें सिखलायीं।

हेमा खूब पढ़ी-लिखी ही न थी; अत्यन्त सुन्दरी भी थी। अगर उसको देखकर कोई जलती थी तो वह उसकी सौतेली माँ थी। राजा जो कोई सम्बन्ध उसके विवाह के लिए ढूँढता तो वह कह देती—"इससे और अच्छा सम्बन्ध मिलेगा!" इस तरह की अड़चनें वह पैदा करती आयी थी।

एक बार बलवर्धन राजा शिकार खेलने गया। सौतेली माँ ने हेमा के पास आने के लिए बार-बार खबर भिजवायी। हेमा ने पहिले तो आना नहीं चाहा, फिर यह सोचकर कि उसकी आज्ञा की अवहेलना करना अच्छा न होगा, वह शाम को सौतेली माँ को देखने चली गयी।

सौतेली माँ ने इस तरह प्रेम दिखाया, जैसे वह उस पर जान देती हो। उसे खूब खिलाया-पिलाया। उसके बाद सौतेली माँ ने हेमा पर चन्दन लगाया, फूल भी दिए। अगरबत्ती का सुगन्ध सुँघाने के बहाने हेमा को उसने कुछ सुँघा दिया। उसको सूँघते ही हेमा मूर्छित हो गिर पड़ी।

राजा की पत्नी ने मूर्छित हेमा को एक लकड़ी के बड़े सन्दूक में लिटा दिया;

श्री रामनारायण आयसवाल

आधी रात के समय अपने नौकरों को बुलाकर, उस सन्दूक को, महल की दीवार से परे, श्मशान में फिंकवा दिया।

उसी दिन रात को, विजय नाम का नौजवान घोड़े पर सवार हो, किसी दूर देश से वहाँ आया था। अन्धेरे में उसे एक झोंपड़ा दिखायी दिया। उसी में क्यों न आराम किया जाय, यह सोचकर वह आगे बढ़ा ही था कि उसे दो-तीन चितायें जलती हुई दिखायी दीं। यह देखकर वह जान गया कि वह श्मशान में था। उस झोंपड़े में श्राद्ध आदि की विधि पूरी की जाती थी।

घोड़े को बाहर बाँधकर विजय झोंपड़े के अन्दर गया। पर उसे नींद न आयी। इतने में, धड़ाम से किसी चीज़ के गिरने का उसे शब्द सुनायी दिया। तुरंत चिता में से एक जलती लकड़ी उठाकर, विजय उस तरफ़ गया, जहाँ से आवाज़ आयी थी। जलती लकड़ी की रोशनी में उसको एक सन्दूक दिखायी दिया। जब सन्दूक खोला, तो उसने एक खूबसूरत लड़की को मूर्छित अवस्था में पाया। वह बड़ा चकित हुआ।

विजय उसको अपने हाथों पर उठाकर झोंपड़े में लाया। उसे होश में लाने के लिए उसने बहुत प्रयत्न किया; पर वह सफल न हुआ! उसे मालूम हो गया कि किसी दुश्मन ने उसकी यह हालत की थी। सवेरा होने को था। इसलिए विजय उस लड़की को घोड़े पर चढ़ाकर, सवेरा होने से पहिले एक गाँव में पहुँच गया; और वहाँ एक ब्राह्मण के घर जाकर उसने कहा—"महाशय! हम बहुत दूर से चले आ रहे हैं। मेरी पत्नी बहुत बीमार है। क्या आप हमें दो दिन अपने घर में रख सकेंगे? मैं इसका इलाज करवाना चाहता हूँ। आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।"

वह ब्राह्मण मान गया और उसने कोने में एक कमरा दिखा दिया। दिन भर विजय हेमा की उपचर्या करता रहा; शाम को जाकर उसको कहीं होश आयी। वह विजय को देखकर चकित हुई। जो कुछ वह जानता था उसने उसे बताया। बाद में हेमा ने उसे अपनी जीवनी भी सुनायी। यद्यपि लाचारी में, विजय ने ब्राह्मण के सामने उसको अपनी पत्नी कहा था, पर उसने मन में उसको अपना पति स्वीकार कर लिया था। वह बहुत खुश हुई।

थोड़े दिनों में हेमा पूरी तरह स्वस्थ हो गयी। पर उन दोनों पर एक और आफ़त आ पड़ी। बलवर्धन ने शिकार से लौटकर हेमा के बारे में पूछ-ताछ की तो उसकी पत्नी ने बताया कि वह किसी के साथ भाग गयी है! राजा को गुस्सा आया। उसने हेमा को खोजने के लिए चारों ओर सैनिकों को भेजा। लोगों को यह बात कहता सुन, विजय ने घर आकर हेमा को भी बतायी। दोनों ने सोच-विचारकर उसी रात कहीं चले जाने की ठानी। क्योंकि अगर हेमा सच भी कहती तो राजा विश्वास न करता। हेमा पर ही केवल आफ़त न

आती, विजय पर भी मुसीबत आती, जिसने उसकी प्राण-रक्षा की थी।

विजय और हेमा जब आपस में सलाह-मशवरा कर रहे थे, तो ब्राह्मण ने भी उनकी बातें सुन लीं। वह जान गया कि हेमा राजकुमारी थी और सौतेली माँ ने उसको मार देने का प्रयत्न किया था।

उसी दिन रात को, अपने निश्चय के अनुसार विजय और हेमा वहाँ से चले गये। वे बहुत दिनों तक इधर-उधर घूमते रहे। घूमते-घूमते वे जयपुर शहर में पहुँचे, और वहाँ एक सराय में पड़ाव किया। रात को

हेमा न सो सकी। कभी कष्ट भोगे न थे; लाड़-प्यार से पली थी। अब परदेश में हर तरह की मुसीबतें झेल रही थी।

विजय ने उसको ढाँढ़स बँधाते हुए कहा—"हेमा, फ़िक्र न करो! अगर मैं यहाँ के राजा से एक बार मिल सका तो मैं सतमंज़िले महल में सोने के झूले पर न झुलाऊँगा!" यह बात जयपुर के राजा भीमवर्मा के कान में भी पड़ी।

बात यों थी कि भीमवर्मा महीने में एक बार वेष बदलकर, रात को यह जानने के लिये घूमता कि लोग उसके बारे में क्या सोच रहे थे। जब वह वेष बदलकर सराय के पास पहुँचा तो विजय की बात उसे सुनायी दी। उसने जानना चाहा कि देखें, यह लड़का सिर्फ़ मेरे दर्शन मात्र से कैसे इस लड़की को सतमंज़िले मकान में रखता है! उसने अगले दिन दरबार में आते ही मन्त्री को बुलाकर कहा—"सराय में कोई नौजवान पत्नी के साथ ठहरा हुआ है। तुरंत सिपाहियों को भेजकर उसको दरबार में निमन्त्रित कीजिए।"

सिपाही सराय में जाकर विजय को गौरवपूर्वक दरबार में लाये। भीमवर्मा ने

उसे देखते ही सिंहासन के पास आसन देकर बैठने के लिए इशारा किया। उसने विजय से कुछ भी बातचीत न की।

दोपहर को दरबार खतम हुआ। राजा के साथ दरबारी उठे। बहुत से दरबारी राजा की इजाज़त लेकर चले गये। बाकी अपने अपने ओहदा-हैसियत के मुताबिक, राजा के साथ एक मंज़िल, दूसरे मंज़िल, तीसरे मंज़िल तक उनको पहुँचा, उनसे बिदा लेकर चलते जाते थे। मन्त्री व अन्य सामन्तों ने चौथी मंज़िल पर राजा से बिदा ली। केवल विजय ही छठी मंज़िल तक उनके साथ गया और उनसे बिदा ले कर, जल्दी जल्दी नीचे उतर आया और लोगों से मिलकर उसने पूछा—"मन्त्री कौन हैं?" "जी हुज़ूर, मैं ही हूँ।"—मन्त्री ने कहा।

मन्त्री के इस विनीत बर्ताव के कई कारण थे। इस नौजवान को, राजा ने बिना मांगे ही, दरबार में बुलाकर दर्शन दिया था। बाद में, राजा ने उसको राज-सिंहासन के पास ही आसन दिया था। दरबार खतम होने के बाद जब और लोग राजा से बिदा लेकर चले गये थे, वह राजा के साथ चलता गया था।

दूसरों की उपस्थिति में, राजा और इस युवक में कोई बातचीत न हुई थी। अगर कुछ बातचीत हुई होगी तो एकान्त में हुई होगी। इसलिये मन्त्री ने सोचा, न जाने यह युवक राजा का कितना विश्वास-पात्र हो। इसी कारण वह घबरा रहा था।

"ओह, आप ही मन्त्री हैं! तो मुझे तुरंत हज़ार कूली, फावड़े वगैरह दिलवाइये। सौ गज़ की जंज़ीर और तीन सौ सैनिक भी चाहिए।"—विजय ने कहा।
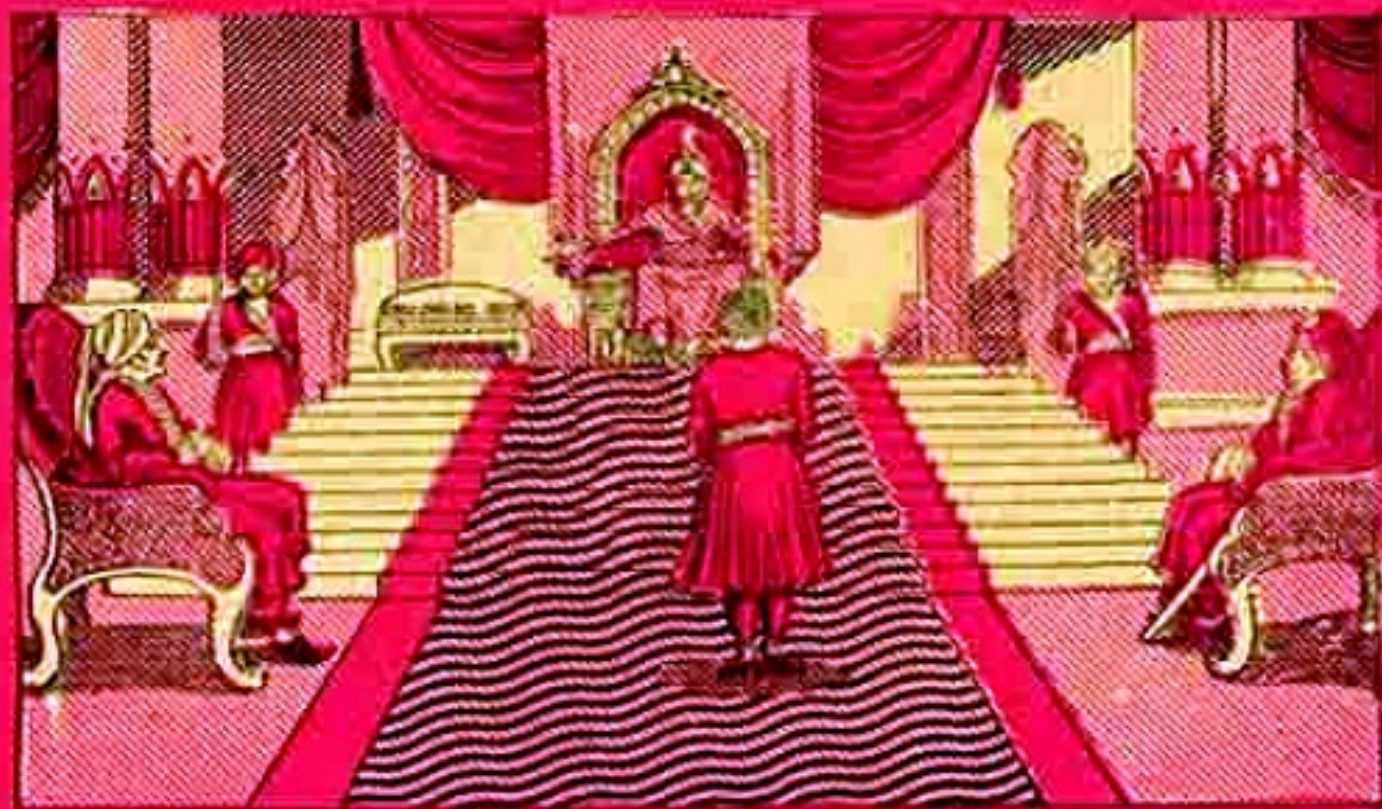
यह सोचकर कि राजा की आज्ञा होगी, मन्त्री ने तुरंत सारा प्रबन्ध कर दिया। विजय, कूली, सैनिक, फावड़े, जंज़ीर आदि लेकर, सड़क पर निकल गया। जहाँ जहाँ उसको नये नये, बड़े बड़े भवन दिखाई देते तो वह उन मकानवालों से पूछता—"सड़क बड़ी करनी है। यह घर किसका है? मालिक को बुलाओ।"

पहिले मकान मालिक ने आकर कहा—"जी हुज़ूर, यह मकान मेरा है।"

"आप तुरंत घर खाली कीजिए। इस मकान को गिरा देना है। देख क्या रहे हो? हटाओ।"—विजय ने कहा।

मकान मालिक घबरा गया—"महाराज थोड़ी देर ठहरिए। ज़रा एक मिनट अन्दर आइए।" कहता-कहता, वह विजय को घर के अन्दर बुला ले गया। थैलियों में रुपया-पैसा भरकर, उसके सामने रखते हुए मकान मालिक ने कहा—"दया कीजिये, मेहरबानी कीजिए। नया घर है। अभी देहली की हल्दी भी नहीं सूखी है।" "अच्छा" कहता, विजय रुपयों की थैली लेकर एक और जगह पहुँचा। इस तरह, उसने शहर में घूमते घूमते, शाम तक बेहद रुपया-पैसा इकट्ठा कर लिया। अन्धेरा हो जाने के बाद उसने उन नौकर-

नौकरों को इनाम देकर कहा—"अब तुम जा सकते हो। काम होगा तो तुम्हारे पास खबर भिजवा दूँगा।"

अगले दिन विजय ने उस धन से शहर के बीचों-बीच एक सत मंज़िला मकान खरीद लिया। उसने उसे क़ीमती चीज़ों से सजाया, सोने के झूले लगवाये, तरह तरह की रोशनी का प्रबन्ध किया, और वह हेना के साथ उसमें आराम से रहने लगा।

महीना ख़तम हो गया था। फिर एक बार भीमवर्मा वेष बदलकर नगर में घूम-फिर रहा था। उसने नगर के बीच एक सत मंज़िला मकान देखा, जो खुबसूरती में राज महल को मात कर रहा था। पहिले उसने इतना जगमगाता हुआ मकान वहाँ न देखा था। राजा ने उस मकान के बारे में तहकीक़ात की। राजा को जब यह मालूम हुआ कि वह मकान उसी युवक का था, जिसको एक महीने पहिले दरबार में बुलाया गया था, उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

"यह कोई बहुत चतुर मालूम होता है। जो कहा था वह इसने करके भी दिखा दिया है।" यह सोच राजा ने विजय को बुलाकर सब कुछ मालूम कर लिया।

उसका मन्त्री नलायक था, उसकी जगह राजा ने विजय को अपना मन्त्री नियुक्त किया। विजय बहुत खुश हुआ।

काफी समय बीत गया। हेना के एक लड़का पैदा हुआ। मन्त्री के लड़का पैदा हुआ है, इस खुशी में, देश में सर्वत्र उत्सव मनाये गये। परन्तु हेना स्वयं सन्तुष्ट न थी। उसका पति, जो उसके पिता के राज्य में राजा होने का अधिकारी था, एक राजा के नीचे मन्त्री था, उसके लड़के को जिसको युवराज कहकर पुकारा जाना चाहिए था, मन्त्री कुमार पुकारा जाता सुन

उसको दुःख होता। वह हमेशा अपने देश, और पिता के बारे में सोचती रहती।

परन्तु हेमा अपने देश को नहीं जा सकती थी। अगर वह कहीं दिखाई देती तो बल्वर्धन उसका सिर धड़ से अलग कर देता। इतने दिनों बाद यह साबित करना असंभव था कि सौतेली माँ ने उसको मारने का प्रयत्न किया था। फिर यह सिद्ध करने के लिये कि वह किसी के साथ चली गई थी, उसका पति और लड़का, प्रत्यक्ष वहाँ थे ही। इस वजह से हेमा घर आने की इच्छा को मन ही मन में रखती।

पर सत्य छुपाये नहीं छुपता है। उस ब्राह्मण ने, जिसने पहिले पहल उसको आश्रय दिया था, राजा के पास जाकर सच कह दिया—जब वह शिकार खेलने गया हुआ था, तब उसकी पत्नी ने हेमा को मारने का प्रयत्न किया था और किसी युवक ने उसकी रक्षा की थी और जान बचाने के लिये वे कहीं चले गये थे—यह जान कर राजा को बड़ा खेद हुआ। उसने अपनी पत्नी को जेल में क़ैद कर दिया और लड़की को ढूँढने के लिए चारों ओर आदमी दौड़ाये। इनमें से कुछ जयपुर भी पहुँचे। विजय ने यह बात हेमा से कही।

जब उसको यह मालूम हुआ कि पिता उसकी इतनी खोज करवा रहे हैं, हेमा को बड़ा आनन्द हुआ। तब विजय ने सारी बात भीमवर्मा से कही और उनसे विदा लेकर वह पत्नी और पुत्र के साथ करिपुर चला गया। बल्वर्धन के सन्तोष की सीमा न थी। उसने अपना सिंहासन विजय को दे दिया, और अपने पोते को युवराज घोषित कर दिया।

राजा की सेवा करना तलवार के धार पर चलना है। यद्यपि राजा भोज कालिदास को अपने प्राणों के समान देखता था, फिर भी वह उससे नाराज हो गया और कालिदास धारा नगरी छोड़कर चला गया।

कालिदास के चले जाने के बाद राजा भोज के पंडितों में एक प्रकार की अराजकता पैदा हो गई। उन पंडितों में तीन चालाक व्यक्ति आ मिले थे। उनमें से एक ऐसा था, जो कुछ वह एक बार सुनता, वह याद कर लेता, दूसरा दो बार सुन लेने पर याद कर लेता, और तीसरा तीन बार सुनने पर। यह थी हालत।

जो कोई कवि नया श्लोक बनाकर सुनाता तो राजा भोज उसको पुरस्कार देकर सम्मान किया करता। पर इन तीनों के आने के कारण पुरस्कार की यह परिपाटी भंग हो रही थी। क्योंकि अगर कोई आकर कोई श्लोक सुनाता, तो इन तीनों में से पहिला उठकर कह देता—"मैंने यह श्लोक सुन रखा है।" और वह भी पूरा श्लोक झट सुना देता। तबतक दूसरा व्यक्ति दो बार सुन चुका होता था, वह भी श्लोक को दुहरा देता। उसके बाद तीसरा व्यक्ति भी वही श्लोक सुनाता। तब राजा भोज को भी विश्वास हो जाता कि वह कोई पुराना श्लोक है। श्लोक बनानेवाला कवि अपमानित होकर चला जाता।

इस तरह कई पंडित नये श्लोक बनाकर राजा भोज के दरबार में आये। उनको पुरस्कार तो मिलता न था, उलटे अपमानित होकर जाते। इस तरह एक अपमानित पंडित, एक बार कालिदास को किसी दूर देश में मिला। उसने पूरा हाल सुनाया।

श्री रमेशचन्द्र श्रीवास्तव

पंडित का कड़ुवा अनुभव सुन कालिदास बहुत चिन्तित हुआ। उसे पता लग गया कि उसके चले जाने के बाद राजा भोज के दरबार की यह अधोगति हो गई थी। कालिदास ने राजा भोज और उसके तीन पंडितों को पाठ सिखाने के लिए, पंडित को एक श्लोक लिखकर देते हुए कहा—"यह श्लोक राजा भोज के दरबार में पढ़िये, आपको ज़रूर पुरस्कार मिलेगा।"

पंडित श्लोक लेकर, राजा भोज की राजधानी, धारा नगरी में पहुँचा। "राजन्! मैं एक नया श्लोक बनाकर लाया हूँ। सुनकर पुरस्कार दिलवाइये।"—" पंडित ने निवेदन किया। राजा भोज ने श्लोक पढ़ने के लिये कहा। पंडित ने श्लोक सुनाया:

"स्वस्ति श्री भोजराज ! त्रिभुवन विदितो
धार्मिकस्ते पिता भू
त्पित्राते वै गृहीता नवनवतिमिता
रत्नकोट्यो मदीया:
ता मेंदेहीति, राजन्' सकल बुध जनै र्जायते सत्यमेत
न्नोवा जनन्ति ते तन्ममकृति मथवा
देहि हस्तोमे।"

"श्री भोज राज स्वस्ति! तीनों लोकों में प्रसिद्ध दाता, धर्मात्मा आपके पिता ने मुझसे

९९ करोड़ रत्न लिए थे। मुझे वे रत्न दिलाइये। ये पंडित भी जानते हैं कि यह बात सच है। अगर न भी जानते हों तो मुझे इस श्लोक के लिए कम से कम एक लाख रत्न दीजिए।"

यह श्लोक सुनते ही ये तीनों पंडित बड़ी दुविधा में पड़े। अगर वे कहते हैं कि उन्होंने पहिले ही यह श्लोक सुन रखा है, तो वे इस बात की गवाही दे रहे होते हैं कि राजा भोज के पिता ने इस पंडित से ९९ करोड़ रत्न लिये थे। यह बात इस श्लोक में लिखी ही है। इन रत्नों के बारे में वे भी नहीं जानते होंगे, जिन्होंने यह श्लोक सुना नहीं होगा। अगर वे कहते हैं कि वे यह श्लोक नहीं जानते हैं, तो यह श्लोक नया माना जायेगा। राजा भोज को सिर्फ़ एक लाख रत्न ही देने पड़ेंगे। इसलिये दरबार में सबने मान लिया कि वह नया श्लोक ही था। राजा भोज ने लाख रत्न पंडित को पुरस्कार में देकर पूछा—"क्यों पंडित जी! आपने इस तरह का श्लोक क्यों लिखा?"

पंडित ने राजा भोज से सब कह सुनाया कैसे पहिले उसने उनके दरबार में एक नया श्लोक सुनाया था और इन पंडितों ने कहा था कि वह पुराना श्लोक है और कैसे उसका अपमान हुआ था। फिर उसने बताया कि किसी ब्राह्मण ने उसको यह श्लोक लिखकर दे दिया था।

राजा भोज को तुरंत सन्देह हुआ कि इस श्लोक को लिखकर भेजनेवाला कालिदास ही हो सकता है। वह उस पंडित के साथ कालिदास के पास गया। उसने उनसे क्षमा माँगी और सादर, फिर उनको धारा नगरी वापिस ले आया।

एक शहर में, एक रईस के सुकुमारी नाम की एक लड़की थी। वह लड़की बहुत आलसी और काम-चोर थी। हमेशा खेलती-कूदती रहती। जब वह सयानी हुई, तो उसका पिता, उसके विवाह के लिए वरों की खोज करने लगा। सुकुमारी ने किसी को पसन्द न किया। आखिर उसने गरीब घराने के एक सुन्दर नवयुवक से विवाह कर लिया। परंतु विवाह में उस नवयुवक से प्रतिज्ञा करवायी गयी कि वह कभी उसे न मारे-पीटे, न डाँटे-डपटे ही।

सुकुमारी ससुराल आ गई थी, पर उसमें कोई परिवर्तन न आया। वहाँ भी वह आलसी बनी रही। भूलकर भी कभी कोई काम न करती। हमेशा अपनी पालतू बिल्ली से खेलती रहती। उस पर वह जान देती थी।

सुकुमारी के पति को सूझता न था कि क्या करे। घर हमेशा गन्दा रहता। किसी दिन भी वक्त पर खाना न बनता। जब वह पूछता कि क्यों खाना समय पर नहीं बनता, तो वह कोई ऊटपटांग जवाब देती।

थोड़े दिनों में ही पति उसकी हरकतें देखकर ऊब गया। उसने कई बार पत्नी को मारने की सोची, पर प्रतिज्ञा को याद कर वह अपने गुस्से को काबू में कर लेता।

आखिर पत्नी को सबक सिखाने के लिए उसे एक उपाय सूझा। एक दिन सुकुमारी की बगल में बिल्ली को पा उसने कहा—"अरी बिल्ली! मैं जब दोपहर को वापिस आऊँ तो घर साफ़ रहे। खाना बनाकर तैयार रख! नहीं तो तुझे सज़ा दूँगा।" जब वह दोपहर को आया तो घर वैसा

श्री सुबोध कुमार

ही गन्दा था। चूल्हे में आग तक न थी। सुकुमारी बिल्ली से खेल रही थी।

उसके पति ने गुस्से में, बिल्ली छीन ली। जब सुकुमारी ने उसको पकड़ना चाहा तो उसने अपने पंजे से खरोंच दिया।

सुकुमारी का पति बिल्ली से पूछने लगा—"मैं सवेरे तुझे क्या कह कर गया था! तूने क्या किया है!" वह उसकी बिल्ली को ही पीटने लगा।

बिल्ली के खरोंचने के कारण सुकुमारी के हाथ में खून बह रहा था; पर वह बिल्ली को पिटता न देख सकी। उसने पति से पूछा—"उसे क्यों पीटते हो! क्या कहीं कोई बिल्ली घर में बुहारी देती है, या खाना तैयार करती है!"

पति ने गुस्से में बिल्ली को फेंकते हुए कहा—"मैं यह सब नहीं जानता हूँ। इस घर में, मुझे इस बिल्ली से ही कहकर काम कराने का अधिकार है।"

इतना सब होने पर भी सुकुमारी न बदली। अगले दिन जब पति वापिस घर आया तो उसने फिर उसके हाथ से बिल्ली छीनकर पूछा—"तुझे अभी तक अक्ल न आई!" उसे उसने खूब पीटा। इस बार भी अपने को बचाने के लिए बिल्ली ने सुकुमारी को खरोंचा।

सुकुमारी ने घबराते हुए कहा—"यह बिचारी बिल्ली मर ही जायेगी।"

"अगर तुझे इस पर इतनी दया है, तो जो काम मैं इसे बताया करता हूँ, वह तू ही कर।"—पति ने कहा।

जब उस दिन वह घर वापिस आया तो घर शीशे के समान चमक रहा था। खाना तैयार था। बिल्ली के प्रेम के कारण सुकुमारी बहुत बदल गई थी।

एक गाँव में धनगुप्त नाम का धनी रहा करता था। दुनियाँ भर के पाप करके उसने करोड़ों रुपया जमा कर लिया था। उसको आदर्श मानकर और कई व्यापारी भी लखपति हो गये थे।

धनगुप्त वृद्ध हो चला था। ज्यों ज्यों मौत पास आती जाती थी, वह अपने पापों के बारे में डरने लगा। ज़िन्दगी भर तो पाप किया, अगर अब भी थोड़ा बहुत पुण्य न कमाया, तो न जाने कि नरक में क्या क्या यातनायें सहनी पड़ेंगी! यही डर सता रहा था। पुण्य कमाने के लिये उसने तीर्थों की यात्रा करने की ठानी।

धनगुप्त को तीर्थ-यात्रा पर जाता देख, तीन और सेठ उसके साथ जाने को तैयार हुए। उन्होंने भी कभी अपने जीवन-काल में पुण्य कमाने का नाम न लिया था।

धनगुप्त, बिना किसी उद्देश्य के कोई काम न करता था। इसलिए उसने सोचा—"पुण्य की बात तो अलग, इस यात्रा से, हो सकता है और भी कोई लाभ हो जाय। ये लाभ भला वे क्यों न उठायें! अलावा इसके, चार मिलकर गये तो खर्च भी कम होगा। अगर रास्ते में किसी को बीमारी हो गई तो दूसरे मदद करेंगे।' यह सब सोच धनगुप्त उनको साथ लेकर चल पड़ा।

वे आपस में सोचने लगे कि काशी चला जाय या रामेश्वरम्? यह कहावत तो मशहूर है—"काशी जाना और श्मशान जाना बराबर है।" रामेश्वरम् पास था, रास्ता भी कठिन न था। यही नहीं, उस गाँव में एक रामलाल नाम का शूद्र रहा करता था। वह घरवालों से झगड़कर तीन बार रामेश्वरम् हो आया था। रामेश्वरम् की

श्री विश्वम्भरलाल नेयर

यात्रा उसके लिए बायें हाथ का खेल थी। इसलिए उसको साथ लेकर उन्होंने यात्रा पर जाने का निश्चय किया।

अच्छा दिन देखकर वे चारों रामलाल के साथ राम नाम जपते जपते रामेश्वरम् के लिए निकल पड़े। यात्रा अच्छी तरह चल रही थी। अभी दो-तीन दिन का और रास्ता था कि आकाश में काले काले गरजते बादल घिर आये। पहले पानी बरसना शुरू किया; फिर आँधी चलने लगी।

उस समय वे एक जंगल में से जा रहे थे। आँधी के कारण कितने ही बड़े पेड़ टूट टूटकर नीचे गिर रहे थे और ऊपर मेघ भयंकर रूप से गरज रहे थे। बिजली कौंध रही थी. बिजली की चमक के कारण उनकी आँखें चकाचौंध हो रही थीं।

वे जान बचाकर एक मन्दिर के खण्डहर में जा घुसे। तुरंत बिजली के साथ वर्षा भी अधिक हो गई। मन्दिर के सामने ही बिजली भयंकर शब्द के साथ गिरने लगी। बिजली समीप ही एक बड़े पेड़ पर गिरी। पेड़ आधा जलकर खाक हो गया और आधा गिर गया! थोड़ी देर में—मन्दिर के और पास—करीब पचीस

फुट की दूरी पर एक और बिजली गिरी। उन पाँचों के होश हवाश उड़ गये।

"अरे, यह क्या बिजली की वर्षा है! मैंने अपनी जिन्दगी में ऐसी वर्षा कभी न देखी। हममें कोई पापी है। उस पापी के कारण ही यह सब हो रहा है।"— धनगुप्त ने कहा।

"यह रामलाल ही पापी है। इस शूद्र को साथ लाना ही गल्ती है। खैर, लाये तो लाये। अब यह हमारे साथ इस पवित्र स्थान में आ खड़ा हुआ है। क्या भगवान नहीं देखते? क्या वे नाखुश नहीं होंगे?"— एक और व्यापारी ने पूछा।

चारों ने मिलकर रामलाल को जबर्दस्ती से मन्दिर से बाहर धकेल दिया।

"बाबू! मूसलधार वर्षा हो रही है। भीग जाऊँगा: दया कीजिये! पुण्य कमाइये! मैं पापी ही सही। अगर आप जैसे पुण्यात्माओं के साथ रहा तो भगवान मेरा कुछ न बिगाड़ेंगे। क्या मेरे एक के कारण भगवान चार को दण्ड देंगे? भगवान ऐसा अन्याय न करेंगे...!" रामलाल ने गिड़-गिड़ाते हुए उनसे कहा।

जैसे जैसे वह हाथ जोड़कर गिड़-गिड़ाता जाता, वैसे वैसे व्यापारी जिद करने लगे। आखिर उन चारों ने मिलकर रामलाल को वर्षा में धक्का दे दिया। वह भागकर एक पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। तभी ऐसा लगा, जैसे आकाश के टुकड़े टुकड़े हो गये हों। बिजली गरजी, प्रकाश हुआ। जब रामलाल ने आँखें बन्दकर खोलीं तो सामने मन्दिर न था। सिर्फ़ पत्थर थे। चारों यात्री भी नहीं दिखाई दिये। बिजली के गिरने के कारण वे मर गये थे!

हास्य कथाएँ :

भरपेट भोजन

एक बार गोहा को एक काफ़िले के साथ जाना पड़ा। पड़ाव आते ही, सब भोजन के लिए बैठ गये। जङ्गल का रास्ता था, इसलिए उनको खाने-पीने की चीज़ों के मिलने की सम्भावना न थी। उनको तोल-तोलकर खाना था।

हर आदमी एक एक रोटी और एक एक अंडा लेकर भोजन के लिए बैठ गये। गोहा को भी उसके हिस्से की एक रोटी और अंडा दिया गया।

गोहा अच्छा खाने-पीनेवाला शख़्स था। उसका पेट भी एक कनस्तर-सा था। भला उसको एक रोटी और एक अंडा क्या काफ़ी होती?

गोहा को अपना हिस्सा अलग करते हुए देख, दूसरों ने पूछा—"गोहा, खाना क्यों नहीं खाते हो?

"क्या मुझे भी खाना पड़ेगा?"—उसने हिचकते हुए पूछा।

"हाँ, ज़रूर।"

"अगर आप चाहते हैं कि मैं खाऊँ, यह काफ़ी है कि अगर आप सब अपने हिस्से की आधी आधी रोटी और आधा अंडा दे दें।"

और यात्रियों को यह सुनकर हँसी आई और उन्होंने उसको चार रोटियाँ और चार अंडे दे दिये।

कद्दू के बराबर शक्कर पारे

एक बार एक मूर्ख पुराण प्रवचन में सुना था कि जो कोई तालाब खुदवाता है, उसको सकल भोगों का आनन्द मिलता है। तुरंत उस मूर्ख ने अपनी ज़मीन-जायदाद बेचकर एक तालाब खुदवाया और चारों तरफ़ बन्द भी बनवाया।

जब वह एक दिन तालाब देखने गया तो बन्द में एक दरार पाई। दूसरे दिन रात को देखा कि एक बैल सींगों से बन्द को कुरेद रहा था! उसने फ़ौरन जाकर बैल की पूँछ पकड़ ली। वह बैल आकाश में उड़कर कैलाश के ऊपर मंड़राने लगा। मूर्ख को वहाँ के लोगों ने खूब खिलाया-पिलाया। कद्दू जितने बड़े शकर पारे दिये। दूसरे दिन उसने अपने सम्बन्धियों को बुलाकर अपनी कैलाश-यात्रा और कद्दू जितने बड़े शकर पारे के बारे में बताया।

"हमें भी एक बार कैलाश पर ले जाओ।" सम्बन्धियों ने कहा।

"आज रात को तालाब पर आओ। मैं नन्दिश्वर की पूँछ पकड़ूँगा. तुम सब मुझे पकड़ लेना। हम सब कैलाश पहुँच सकेंगे।"—उसने कहा।

पहले नान्दीश्वर की पूँछ उस मूर्ख ने पकड़ ली, उसको एक बन्धु ने पकड़ लिया, उस बन्धु को एक और ने, इस तरह ज़ंजीर की तरह वे सब उड़ चले। रास्ते में मूर्ख को पकड़े हुए बन्धु ने पूछा—"कैलाश में कितने बड़े शकर पारे होते हैं?" मूर्ख ने नान्दी की पूँछ छोड़कर कहा—"इतने बड़े बड़े।" उसके बाद वे सब धड़ाम से नीचे गिर गये।

मामा जी की करामत !

दुश्मनी

दो दुश्मन एक ही नाव में सफ़र कर रहे थे। क्योंकि वे जानी-दुश्मन थे, वे दोनों आमने-सामने नाव के किनारे पर बैठ गये।

तूफ़ान चलने लगा, और नाव डूबने लगी। पतवार चलानेवाले से, एक दुश्मन ने पूछा—"नाव का अगला भाग पहिले डूबेगा या पिछला?" पतवार चलानेवाले ने कहा—"अगला भाग ही पहिले डूबेगा।"

"शाबाश! पहिले उस बेईमान धूर्त को मरता देखकर ही, मैं मरूँगा।" पतवार चलानेवाले के पास बैठे दुश्मन ने कहा।
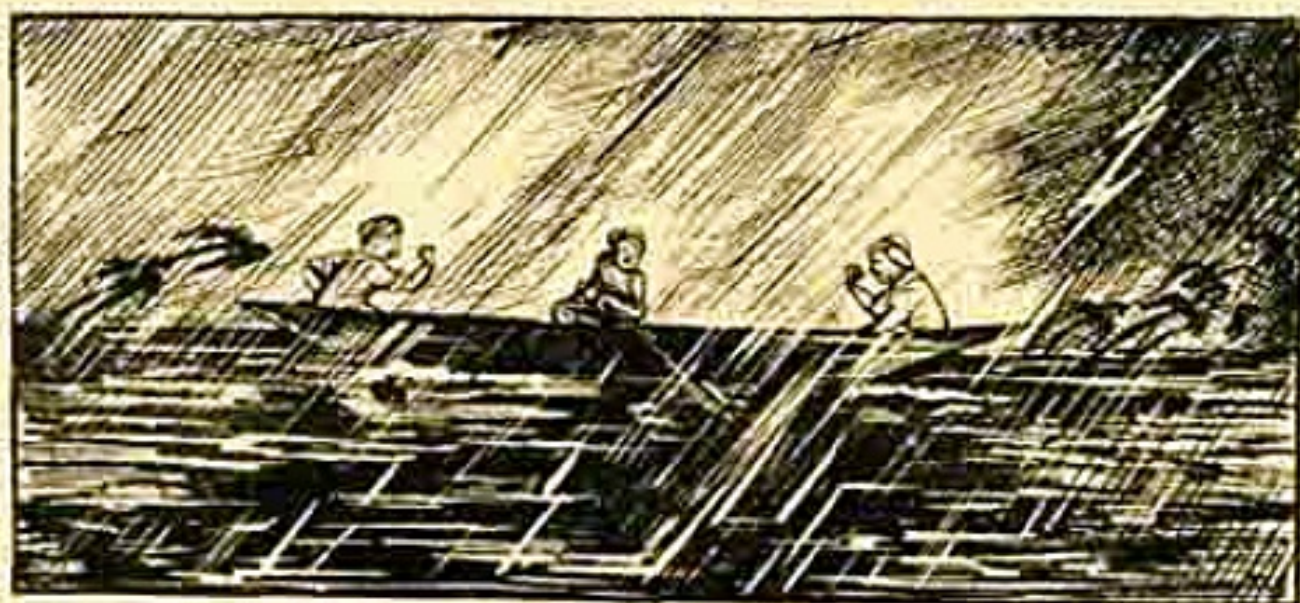
स्वप्रशंसा

एक व्यक्ति अपनी प्रशंसा आप ही करता हुआ अपनी लिखी हुई कोई रचना लेकर ईसप के पास उसकी राय जानने के लिए गया।

"यह ठीक ही है कि तुम अपने आप अपनी प्रशंसा कर रहे हो। क्यों कि और कोई तुम्हारी शायद प्रशंसा न करे।"—ईसप ने कहा।

लोमड़ी और खरगोश

एक खरगोश एक बड़े खोद में रहा करता था। वह मूलियां बोकर, उसे खाते आराम से जिन्दगी बसर कर रहा था। इस खरगोश पर बहुत दिनों से एक लोमड़ी की नज़र थी। उसने खरगोश को पकड़ने के लिये कई चालें चलीं। पर समझदार खरगोश के सामने उसकी एक न चली।

आखिर लोमड़ी को, खरगोश को पकड़ने के लिए एक अच्छी चाल सूझी। खरगोश हर रोज़ सवेरे, एक रास्ते पर से टहलने आया करता था। उस रास्ते में लोमड़ी ने थोड़ा-सा तारकोल पोता, और उस पर हरी घास बिछा दी। जब खरगोश टहलने के लिये आया तो उसके पैर तारकोल में चिपक गये।

इस बीच लोमड़ी आ गई। खरगोश को फँसा देख, वह खुश होने लगी और उसको भूनने के लिए आग बनाने लगी।

"लोमड़ी मामा! मेहरबानी करके आग इतनी पास न जलाओ।"

"तुम्हें तो आग के और भी नज़दीक आना होगा।"

आखिर वह बेअक़्ल लोमड़ी आग खरगोश के इतने पास लाई कि खरगोश के पैरों पर लगा तारकोल पिघलने लगा। देखते देखते, खरगोश ने एक छलांग मारी। "लोमड़ी मामा! मेरी जान बचाने के लिये शत शत धन्यवाद।" कहते कहते खरगोश चौकड़ियाँ भरता वहाँ से भाग गया। लोमड़ी अपना-सा मुँह ले वहीं की वहीं रह गई।

जाति-द्वेष !
१
२
३
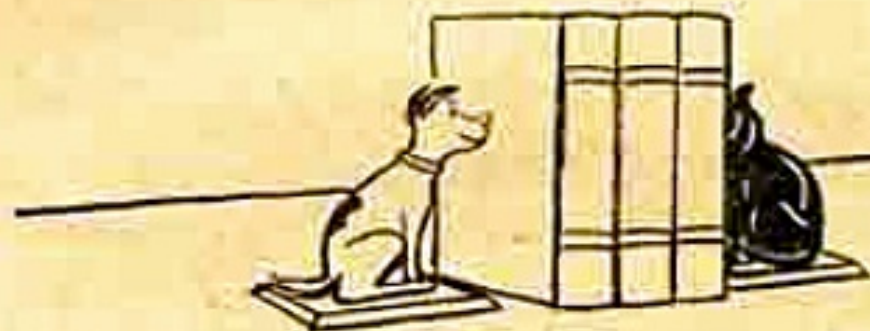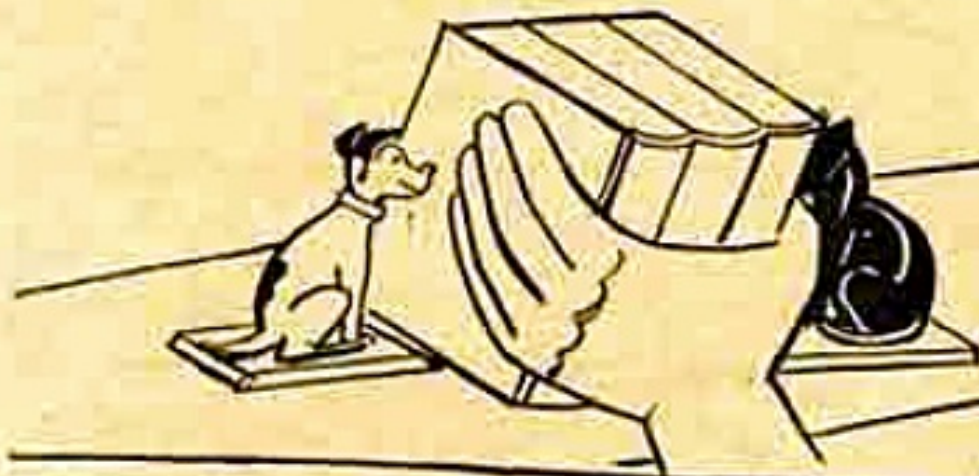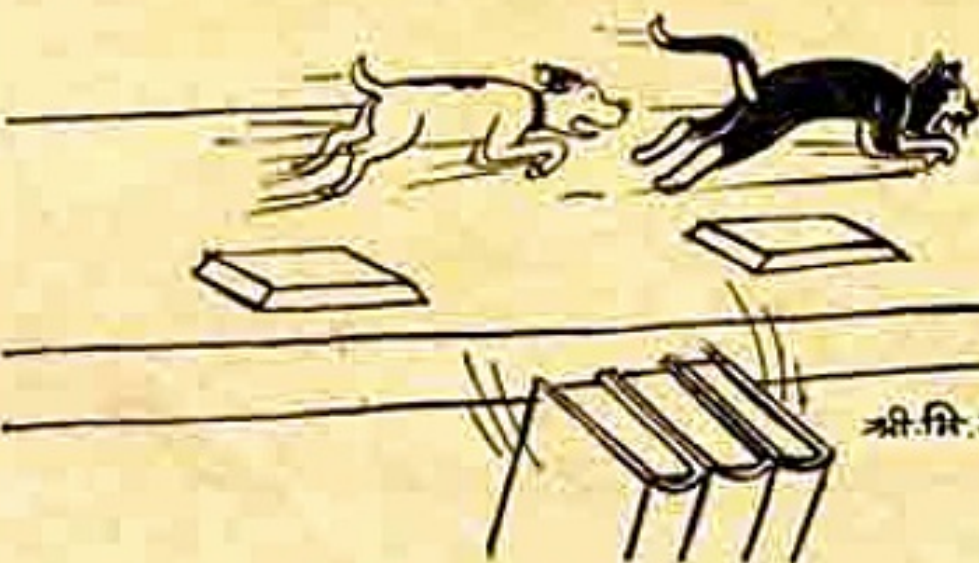
शान्ति–मार्ग

जब महा बलशाली हरक्यूलस एक बार सड़क पर जा रहा था तो उसको रास्ते में कोई फल-सा दिखाई दिया। हरक्यूलस ने उसको पैर से कुचल दिया। तुरंत वह फल दुगना हो गया। वह गुस्से में गदा से पीटने लगा। उसका आकार बढ़ता गया और रास्ते में रुकावट पैदा हो गई।

तब एथिना देवी ने प्रत्यक्ष होकर कहा—"हरक्यूलस! बस, यह काफ़ी है। यह अभिमान है। जितना इसे पीटोगे, उतना यह बढ़ता जायेगा। अगर इसे छोड़ दिया तो यह घिस घिसाकर ख़तम हो जाता है।"

बेमौके की बात

एक लड़का नदी में स्नान करने गया। उसके पैर फ़िसल गये और वह धार में बह गया। बहते बहते वह आवाज़ लगाने लगा।

उसकी आवाज़ सुन, किनारे पर खड़ा आदमी यह लेक्चर झाड़ने लगा कि उसको किन किन ख़तरों का सामना करना पड़ेगा।

"पहिले मुझे बाहर निकालिये। फिर अपना लेक्चर, फ़ुरसत से देना।" लड़के ने पानी की धारा में बहते हुए कहा।

बेअक्ली या बदकिस्मती

एक आदमी चलता चलता बहुत थक गया, और सुस्ताने के लिये एक कुएँ की मुँडेर पर सो गया। जब वह नींद में, कुएँ में गिरनेवाला ही था कि भाग्य देवता ने उसे उठाकर कहा—थोड़ा हटकर सोओ भाई! अगर कहीं तुम अपनी बेअक्ली से कुएँ में गिर पड़ा तो फ़िजूल मुझे कोसेंगे।"

फ़ालतू सोना

एक लोभी ने अपनी सारी जमीन-जायदाद बेचकर एक सोने का गोल खरीदा। उसे छुपाकर एक जगह रख दिया, और रोज़ उसको देखकर खुश हुआ करता। यह पता लगाकर किसी ने उसको चुरा लिया। जब उसको मालूम हो गया कि उसका सोना कोई चुरा ले गया है तो वह बाल नोंच नोंचकर रोने लगा।

यह देख एक राहगीर ने कहा—"तेरा नुकसान ही क्या हुआ है! तूने सोना रखे ही तो रखा था। उसका उपयोग तो तू कर ही नहीं रहा था। सोने की जगह एक पत्थर रख ले और उसी को सोना समझकर तसल्ली कर ले।"

बताओगे ?

(१) महानदी कहाँ है ?

(२) आन्ध्र की तात्कालिक राजधानी क्या है ?

(३) इस समय पाकिस्तान के प्रधान मन्त्री कौन हैं ?

(४) मद्रास के समीप दो ऐसे ऐतिहासिक स्थल बताओ, जहाँ अधिक यात्री जाते हैं ?

(५) संसार का सबसे बड़ा द्वीप-समूह बताओ ?

(६) तिब्बत में अब किसका राज्य है ?

(७) सबसे बड़ा मस्तूल कहाँ है, और क्या नाम है ?

(८) मोरोको में किसका शासन है ?

(९) क्या आन्ध्र में हिन्दी अनिवार्य है ?

(१०) अबिसीनिया के राजा का नाम क्या है ?

पिछले महीने में प्रकाशित प्रश्नों के उत्तर

१. बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली (नई दिल्ली मिलाकर) उनकी आबादी क्रमशः २८,३९,२७०; २५,४८,६७७; १४,१६,०५७ और ११,९१,१०४ है।

२. विजय स्तम्भ

३. कुर्ग, मैसूर राज्य के दक्षिण-पश्चिम में है। यहाँ कुर्गी भाषा बोली जाती है, जो कोंकणी और कन्नड़ से मिलती-जुलती है।

४. यूरोप में।

५. चीन में।

६. अमेरीका का।

७. नील नदी।

८. चित्तरंजन लोकोमेटिव फ़ैक्टरी।

९. ३४,००० मील।

१०. श्री लाल बाहुदर शास्त्री

११. वह विशेष डब्बा, जिसमें बड़े लोग अक्सर यात्रा किया करते हैं। इसमें सब सहूलियतें रहती हैं। विशेष किराये पर भी यह मिलता है।

१२. फ़िलहाल कोई नहीं है।

श्री विनोबा भावे जी भूदान आन्दोलन की उड़ीसा-यात्रा समाप्त कर ता. १–१०–'५५ को आन्ध्र प्रदेश में प्रविष्ट हुए! आन्ध्र के निवासियों ने उनका बड़ा अच्छा स्वागत किया और भूदान आन्दोलन में सहयोग देने का भी वचन दिया। वे आन्ध्र में तीन महीने तक पैदल ही यात्रा करेंगे। एक लाख एकड़ की जमीन वे वहाँ प्राप्त करना चाहते हैं।

• • •

बहुत दिनों से भारत की प्रजा सोशलिस्ट पार्टी में, दो गुट चले आते थे। एक गुट के नेता, डा. राम मनोहर लोहिया थे। अब उन्होंने खुल्लमखुल्ला अपनी पार्टी स्थापित कर ली है, जिसको "सोशलिस्ट पार्टी" कहा जा रहा है।

प्रादेशिक रूप से इस पार्टी के अधिवेशन हो रहे हैं। साल के अन्त तक, कहा जाता है, यह पार्टी एक मज़बूत बुनियाद पर खड़ी हो जायेगी, और आगामी निर्वाचन में सोत्साह भाग भी लेगी।

• • •

समाचार पत्रों में कहा जा रहा है कि भाषा के आधार पर हैदराबाद राज्य के तीन भाग किये जायेंगे—एक कन्नड़ भाषी, दूसरी, मराठी भाषी और

तीसरा, तेलुगु भाषी। कन्नड़ और मराठी भाषी प्रान्तों को समीपस्थ कन्नड़ और मराठी प्रान्तो में मिला दिया जायेगा और तेलुगु भाषी प्रान्त को, शायद एक पृथक राज्य की सत्ता दी जाय।

आम निर्वाचन के बाद, जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को यह विकल्प दिया जायेगा कि वे पृथक राज्य चाहते हैं। अथवा तेलुगु भाषी आन्ध्र के साथ चाहते हैं। उनके नियम के अनुसार ही आवश्यक कार्यवाही होगी। सरकारी तौर से, राज्य पुनःनिर्माण आयोग की रिपोर्ट, आशा की जाती है कि जल्द ही प्रकाशित होगी।

• • •

केन्द्रीय सरकार ने बच्चों के लिये विशेष फिल्म बनाने के उद्देश्य से, एक सोसाइटी स्थापित की है, जिसको "चिल्डरन्स फिल्म सोसाइटी" कहा जायगा। इसके अध्यक्ष श्री हृदयनाथ कुंजरू हैं।

यह भारत की अपने ढंग की पहिली संस्था है। दस रुपये सालाना शुल्क पर इसका कोई भी सदस्य बन सकता है।

• • •

ज्ञात हुआ है कि दिल्ली के 'लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज' में भारत सरकार की तरफ़ से एक 'शिशु चिकित्सा केन्द्र' एवं एक 'विद्युत चिकित्सा केन्द्र' अगले साल खोलने का निश्चय किया गया है।

राज्य सभा में स्वास्थ्य मंत्रिणी श्री राजकुमारी अमृतकौर ने यह भी बतलाया कि ये चिकित्सा केन्द्र रूस के डाक्टरों की देखरेख में रहेंगे और इसके लिए आवश्यक शस्त्र-साधन आदि का भी प्रबन्ध रूस की तरफ़ से ही होनेवाला है।
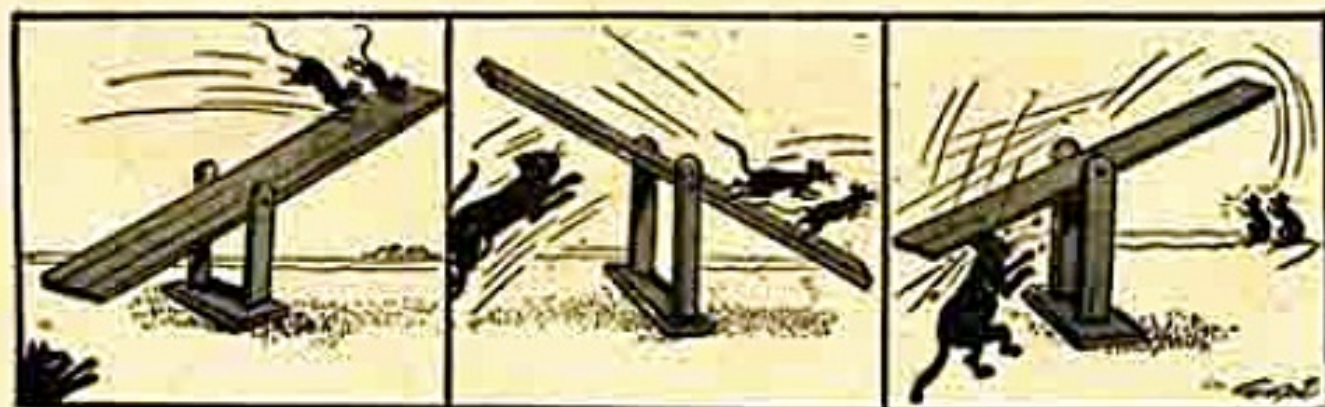
रंगीन चित्र-कथा : चित्र - ५

राजा की बात सुनकर 'ज्योति' ने कहा—"मेरे पति आप से कई गुना अच्छे हैं। मैं उन्हें छोड़ना नहीं चाहती।" यह कहते कहते वह इतनी तेज़ी से वहाँ से चली गयी कि कोई उसे रोक भी न सका।

राजा आग बबूला होते हुए कहा—"यह कहने का उसे कैसे साहस हुआ कि उसका पति मुझसे कई गुना अच्छा है!" उसने फौरन् अपने नौकर से च्वांग को कहला भेजा कि कल की घुड़दौड़ में जो जीतेगा, 'ज्योति' उसकी पत्नी बनकर रहेगी।" राजा का नौकर भागा भागा च्वांग के यहाँ गया और राजा की आज्ञा उसे सुना दी।

'ज्योति' ने यह समाचार सुनकर अपने पति च्वांग से धीरज बँधाते हुए कहा—"डरने की कोई बात नहीं।" उसने लकड़ी और कागज़ से एक घोड़ा बनाया और उस में हवा फूँक दी। देखते देखते एक सफ़ेद घोड़ा तैयार हुआ, जो देखने में सुन्दर भी था और हृष्ट-पुष्ट भी।

दूसरे दिन च्वांग और राजा के बीच घुड़दौड़ शुरू हुई। पहले राजा का काला घोड़ा आगे आगे दौड़ता रहा और वह विजय-गर्व से पीछे की तरफ़ देखकर च्वाँग की अवहेलना करता जाता।

पर घुड़दौड़ जब ख़तम होने को थी, तो च्वाँग का सफ़ेद घोड़ा देखते देखते राजा के घोड़े से एक दम आगे बढ़ गया! लोगों ने तालियाँ बजा बजाकर च्वाँग का उत्साह बढ़ाया।

च्वांग घुड़दौड़ की बाज़ी में जीत गया। अन्त में उसने राजा से कहा—"बस इतना ही तो है!"

उस क्रूर राजा को यह मंजूर नहीं था; इसलिए उसने दाँत पीसते हुए उत्तर दिया—"नहीं, यह तो कुछ नहीं; कल नावों की बाज़ी होगी। अगर उसमें तुम जीत गये तो अपनी पत्नी को रख सकते हो।"—उसके बाद........

आदिम जीव-जन्तु

हमने यह जान लिया कि ५० करोड़ वर्ष पहले 'ट्रैलोबैट' समुद्र के प्राणियों का बादशाह बन बैठा था! ठीक इसी समय 'समुद्र की कलियां' पैदा हुईं। ये देखने में फूल की तरह होते थे। नीचे के भाग में पतले और लम्बे डण्ठल से लगी एक जड़ होती थी। ये, एक तरह के आदिम जीव-जन्तु थे। ये धीरे धीरे 'क्रिनाइड्' नाम के प्राणियों के रूप में परिणत हुए। ये प्राणी आज भी मौजूद हैं।

'ट्रैलोबैट' के बाद एक और दूसरे प्राणी का जन्म हुआ, जो 'शिर:पाद' कहलाते थे। इनके शरीर एक गोल सीप के अन्दर छिपे रहते थे। उसके सिर और हाथ नीचे की तरफ़ होते थे, इसी लिए इनका नाम 'शिर:पाद' पड़ा! इनमें कुछ ऐसे भी थे, जो लम्बे और सीधे सीपों के अन्दर छिपे रहते थे।

होते होते 'शिर:पाद' का आकार-प्रकार 'ट्रैलोबैट' से कई गुना बढ़ता गया। लम्बे सीपवाले 'शिर:पाद' का शरीर २० फुट तक का भी होता था। ये 'ट्रैलोबैट' को आसानी से खा भी लेते थे। इससे बड़ा प्राणी उस समय कोई दूसरा नहीं था!

'शिर:पाद' दस करोड़ वर्ष जिन्दा रहने के बाद उनका नामोनिशान मिट गया।

'शिर:पाद' के वंशज आज भी समुद्र में जिन्दा हैं।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जनवरी १९५६ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

नवम्बर – प्रतियोगिता – फल

नवम्बर के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फोटो : बुलाते हैं, संकेत से ! दूसरा फोटो : देखते हैं सन्देह से !!

प्रेषक : श्री बी. वेणुगोपालराव, जमशेदपुर.

रंगवल्ली
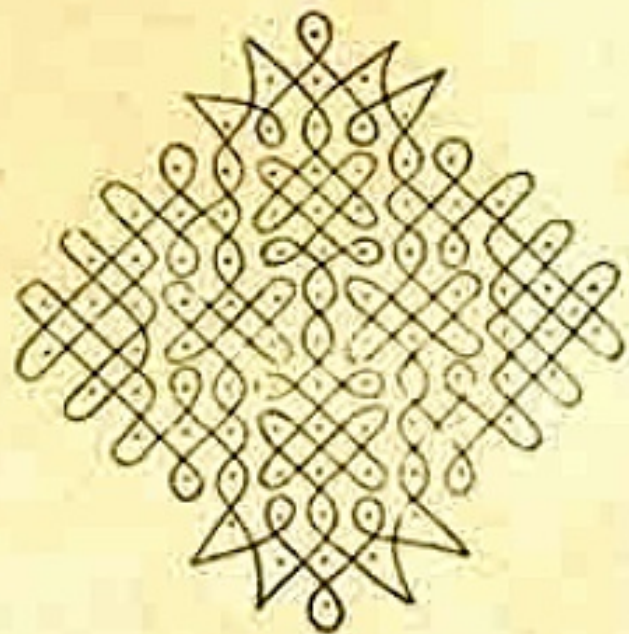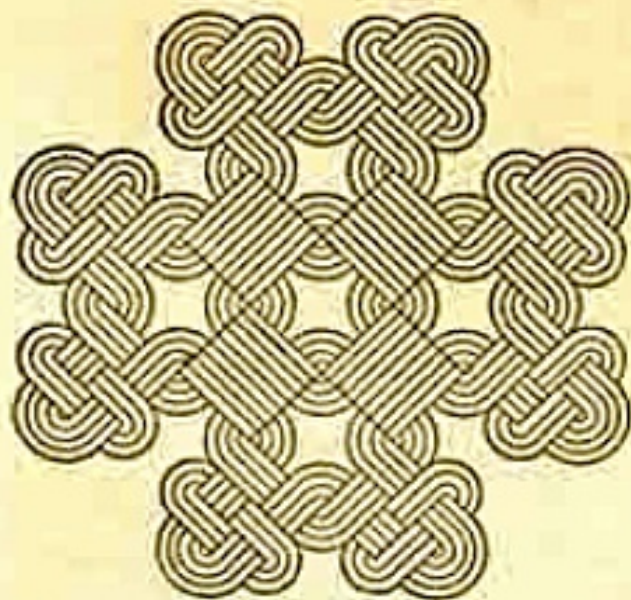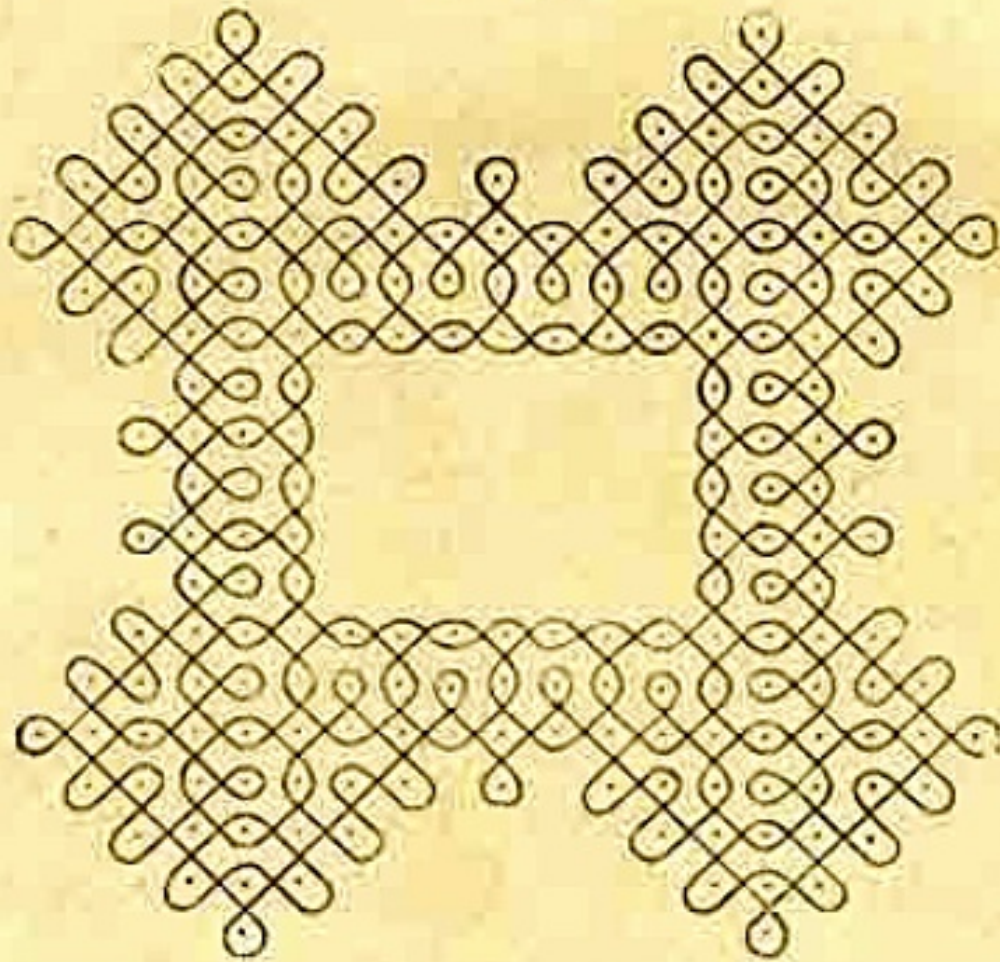
चित्र - कथा

इतवार के एक दिन दास और बास पतंग उड़ाने गाँव के बाहर 'टाइगर' के साथ गये। रास्ते में दास ने एक शर्त लगायी कि जिसकी पतंग ऊँची उड़ेगी, उसे हारनेवाले को दो आने देने चाहिए। बास इसके लिए मान गया; दोनों अपनी अपनी पतंग उड़ायी। उनके पीछे 'टाइगर' ने भी उनकी देखादेखी नीचे पड़ी हुई पतंग को अपने पैरों से पकड़ लिया। 'टाइगर' की पतंग दास और बास की पतंगों से भी ऊँचा उड़ता देख वे दोनों दंग रह गये। उन्होंने अपनी हार मान ली और 'टाइगर' के लिये दो आने के बिस्कुट खरीदकर खिलाये।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by P. K. Patel
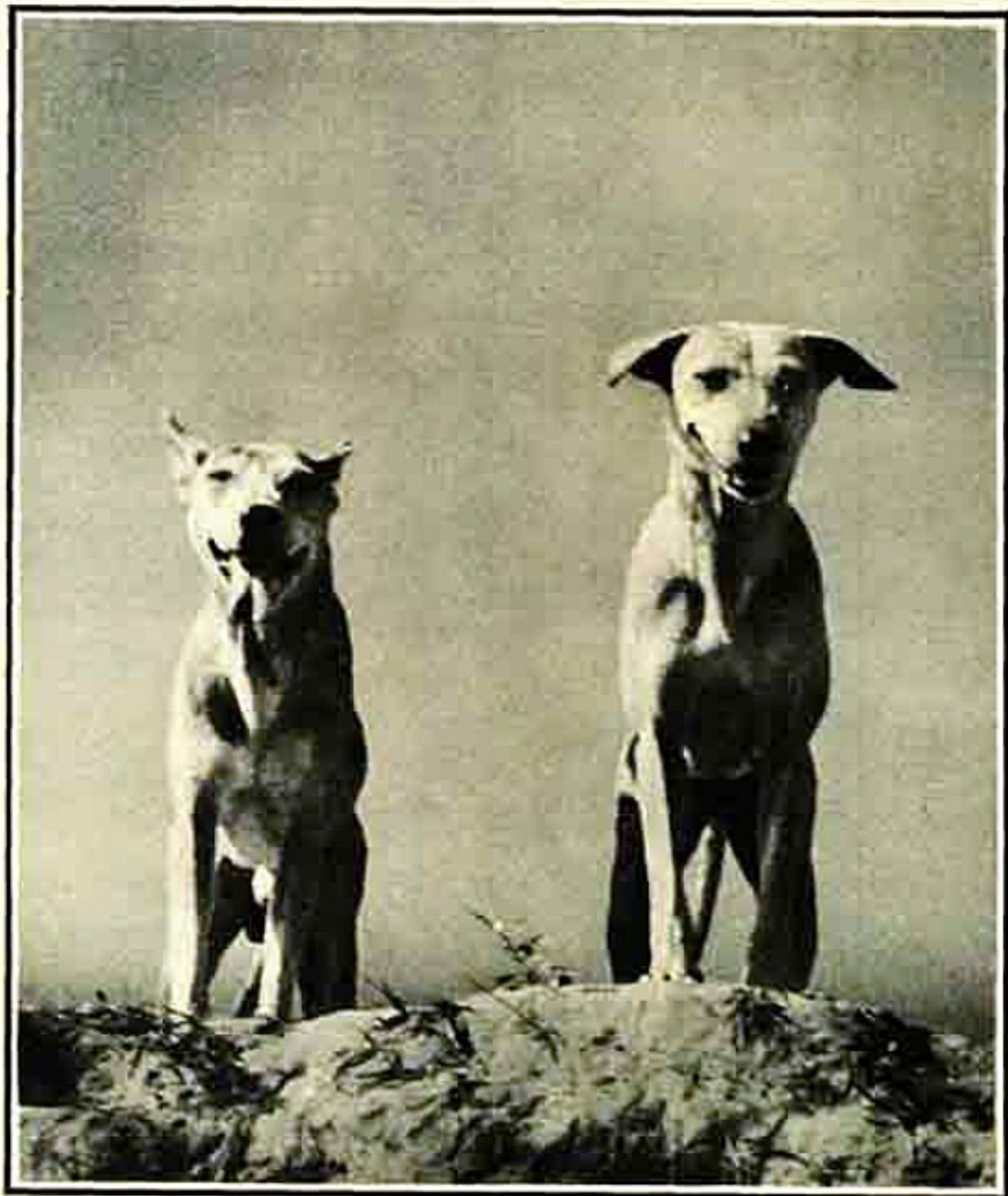
पुरस्कृत परिचयोक्ति

देखते हैं, सन्देह से !!

प्रेषक
वी. वेणु गोपालराय-जमशेदपुर.

रंगीन चित्र-कथा चित्र–५